डा० महेश झा विरचितम

गलज्जलिकाशतकम्

(हिन्दी.अनुवादसहितम्)



2014 ई0

डा0 महेश झा विरचितम्

ालज्जालिकाशतकम्

(हिन्दी-अनुवादसहितम्)

मूललेखकः

डॉ० महेश झा
एम०ए०,नव्य न्यायाचार्य (लब्ध स्वर्णपदकः)
पी-एच०डी० (विद्यावारिधि)
पूर्व प्राचार्य एवं अध्यक्ष
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग
ति०माँ भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर (बिहार)

हिन्दी अनुवादकः सम्पादकश्च
डॉ0 सीताचरण झाः
व्याकरणसाहित्यधर्मशास्त्राचार्यः
पी-एच0डी0 (विद्यावारिधिः)
प्रधानाचार्य
राजकीय संस्कृत महाविद्यालय भागलपुर (बिहार)

2014 ई0

डा0 महेश झा विरचितम्

गलज्जलिकाशतकम

(हिन्दी-अनुवादसहितम्)

मूललेखकः

डॉ० महेश झा

एम०ए०,नव्य न्यायाचार्य (लब्ध स्वर्णपदकः)
पी-एच०डी० (विद्यावारिधि) पूर्व प्राचार्य एवं अध्यक्ष
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, ति०माँ भागलपुर विश्वविद्यालय भागलपुर (बिहार)

हिन्दी अनुवादकः सम्पादकश्च

डॉ० सीताचरण झाः

व्याकरणसाहित्यधर्मशास्त्राचार्यः
पी.एच०डी० (विद्यावारिधिः)
प्रधानाचार्य : राजकीय संस्कृत महाविद्यालय भागलपुर (बिहार)

संस्करणः- प्रथम २०१४ ई०

प्रकाशकः-

देवकला झा
भगवती प्रकाशन कलायत्नम
शास्त्री नगर, मुंगेर (बिहार) ८११२०१

मुद्रकः

एस.एस. इण्डस्ट्रीज

ए-४७, गांधी नगर, मुरादाबाद-२४४००१

मूल्य : रू० २५०/- मात्र

डा0 महेश झा विरचितम्

गलज्जलिकाशतकम्

(हिन्दी-अनुवादसहितम्)

हिन्दी अनुवादकः सम्पादकश्च

डॉ0 सीताचरण झा

व्याकरणसाहित्यधर्मशास्त्राचार्यः

पी–एच0डी0 (विद्यावारिधिः)

प्रधानाचार्यः

राजकीय संस्कृत महाविद्यालयः भागलपुरम् ।

2014 ई0

सम्पादकीय

डॉ० महेश झा जी द्वारा विरचित 'गलज्जलिकाशतकम्' को अपने सम्पादन में हिन्दी अर्थ के साथ प्रकाशित कराते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है। यह 'गलज्जलिकाशतकम्' १०३ गलज्जलिकाओं (संस्कृत ग़ज़लों) का एक संग्रह है। इसमें अनेक विषयों पर ग़ज़ल लिखी गई हैं। सारी ग़ज़ल रस-भाव समन्वित, अलंकारपूर्ण, सहज-स्वाभाविक, सहृदयसंवेद्य हैं। इसमें प्राचीन एवं नवीन काव्यशैलियों का संगम है। ग़ज़लों में डॉ० झा जी की काव्य-प्रतिभा, कल्पनाक्षमता, सौन्दर्य-बोध अलंकार योजना, अर्थानुगुण पदशय्या आदि संस्कृत में ग़ज़ल-विधा को समृद्ध बनाने में सर्वथा समर्थ हैं। ग़ज़ल का एक-एक शेर कल्पना या विचार की गम्भीरता के साथ अपने स्वाभाविक प्रवाह में कहा गया है जो बरबस मन को आन्दोलित किए बिना नहीं रहता।

गुरुवर डॉ० महेश झा जी, सम्प्रति संस्कृत के ख्यातनामा कवि श्रेणी में अग्रगण्य हैं। इससे पूर्व गुरुदेव झा जी की अनेक संस्कृत-रचनाएँ पाठकों के बीच विश्रुत हो चुकी हैं। हाल ही में प्रकाशित मैथिली-गीता तथा कुर-आन पुराणम् गुरुदेव डॉ० झा जी के यश को सब ओर पूरे देश में फैला रहे हैं। 'गलज्जलिकाशतकम्' का यह प्रकाशन भी सर्वत्र सबको स्वीकार्य एवं श्लाघ्य होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

इस प्रकाशन में स्वामी संजीवानन्द, महावतार प्रिंटर्स, बेकापुर मुंगेर (बिहार) के सत्प्रयास एवं सहयोग के हम आभारी हैं, जिसके फलस्वरूप यह इस रूप में प्रकाशित हो रहा है। जाने-अनजाने जिस किसी की भी मदद इस कार्य में मिली है, उन सबके प्रति मैं आभार व्यक्त करता हूँ। इस प्रकाशन में सब प्रकार की त्रुटियों के लिए मैं अपने को उत्तरदायी मानता हूँ। साथ ही मेरा विश्वास है कि पाठक गण हिन्दी अर्थ के साथ प्रकाशित इस 'गलज्जलिकाशतकम्' को अपनाकर हमें अनुगृहीत अवश्य करेंगे।

भवदीय,

दिनांक - २०.११.२०१४ — डा० सीताचरण झा

भूमिका

आज मुझे 'संस्कृत-ग़ज़लम्' का बृहत्संस्करण 'गलज्जलिका-शतकम्' के रूप में प्रस्तुत करने में काफी खुशी हो रही है। ५८ ग़ज़लों का 'संस्कृत-ग़ज़लम्' २००८ ई० में प्रस्तुत किया गया था। उसके बाद कुछ और ग़ज़लें मैंने लिखी थी। तो मैंने सोचा कि क्यों न ४५ ग़ज़लों के लगभग मिलाकर शतक के रूप में 'संस्कृत-ग़ज़लम्' का ही बृहत्संस्करण प्रस्तुत किया जाय। कारण यह था कि इससे पूर्व मेरे कई शतक जैसे श्रीचण्डिका-शतकम्, सपर्या-शतकम्, आर्या-शतकम् तथा वसन्त-शतकम् प्रकाशित हो चुके थे। इधर संस्कृत में ग़ज़ल के लिए कई नाम जैसे गलज्जलिका, गज्जलिका आदि व्यवहार में आ चुके थे। इनमें मुझे 'ग़लज्जलिका' नाम कुछ अधिक अच्छा लगा। क्योंकि इस नाम की व्युत्पत्ति मुझे मालूम हो चुकी थी। एक बार तिरुपति के संस्कृत कवि सम्मेलन में संस्कृत के विख्यात ग़ज़लकार माननीय डा० अभिराज राजेन्द्र मिश्र जी ने बातचीत के क्रम में मुझे ग़ज़ल के लिए गलज्जलिका शब्द ही उपयुक्त बताया था। साथ ही उन्होंने इस नाम की व्युत्पत्ति भी बतायी थी, जो मुझे उपयुक्त लगी। व्युत्पत्ति इस प्रकार थी - गलन्ति जलानि (नेत्रजलानि) यस्याः, सा गलज्जलिका। तात्पर्य यह है कि जिसके सुनने या पढ़ने से आँसू गिरे वह गलज्जलिका है। ये आँसू ग़ज़ल की अतिशय प्रभावोत्पादकता के सूचक होते हैं। ग़ज़ल के अनुशीलन से हार्दिक संवेदना इस तरह उमर पड़ती है कि सहृदय की आँखों में आँसू छलक जाते हैं। संस्कृत के गीत काव्यों में भी इसी तरह की प्रभावोत्पादकता देखी जा सकती है।

'संस्कृत ग़ज़लम्' में मैं डा० चन्द्रकान्त शुक्ल जी लिखित 'उपोद्घात' तथा डॉ० दामोदर महतो द्वारा लिखित 'ग़ज़ल - एक दृष्टि' इस बृहत्संस्कृतण 'गलज्जलिका शतकम्' में भी उसी प्रकार उद्धृत कर रहा हूँ। दोनों ही लेख वैदुष्यपूर्ण तथा गवेषणात्मक दृष्टि से लिखे गये हैं। किन्तु मुझे भी ग़ज़ल के सम्बन्ध में कुछ कहने का लोभ हो रहा था, जिसे मैं रोक न पाया। इसलिए इतने महत्त्वपूर्ण उपोद्घात तथा 'ग़ज़ल एक दृष्टि' जैसे लेख के होते हुए भी मैंने

अपनी ओर से ग़ज़ल के संबंध में इस भूमिका में कुछ बातें कही हैं।

ग़ज़ल विश्व की काव्य-विधाओं में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथा लोकप्रिय विधाओं में से एक है। यही कारण है कि विश्व की अनेक भाषाओं में ग़ज़ल कही जाती है। उर्दू भाषा में तो ग़ज़ल का पूरा विकास हुआ है। वहाँ ग़ालिब, मीर आदि नाम विश्वविख्यात हैं। हिन्दी भाषा में भी ग़ज़ल कहने की परम्परा प्राचीन और अत्यन्त लोकप्रिय हो चुकी है। इसके अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं में भी ग़ज़ल विधा अपनाई जा चुकी है और वहाँ उसे काफी लोकप्रियता मिल रही है। संस्कृत भाषा में धीरे धीरे ग़ज़ल अपना प्रवेश पा रही है। संस्कृत ग़ज़लकारों में सर्वश्री अभिराज राजेन्द्र मिश्र, जगन्नाथ पाठक, बच्चू लाल अवस्थी, इच्छाराम द्विवेदी आदि नाम उल्लेखनीय है।

इस तरह की अत्यन्त लोकप्रिय काव्य विधा ग़ज़ल का प्रादुर्भाव कब और कैसे हुआ, यह निश्चित तौर पर कह पाना कठिन है। फिर भी लोग कुछ-कुछ बातें अपनी गवेषणा या ऐतिहासिक चिन्तन के आधार पर कहते हैं। मुझे जो इसके सम्बन्ध में मालूम है, वह इस प्रकार है। ईरान में गज़ाल नाम का एक आदमी था। वह अति संवेदनशील कवि हृदय था। वह अपनी प्रियतमा से बहुत प्यार करता था। वह कविता के माध्यम से ही उससे बात करता था। धीरे-धीरे अन्य लोगों ने जब यह प्रेमी- प्रेमिका का संवाद सुना तो उसे काफी रुचिकर लगा और काफी लोकप्रिय हो गया। और उसी के नाम से ग़ज़ल विधा चल पड़ी। उर्दू भाषा में तो यह इतना विख्यात हुई कि सब तरह की कविता के लिए ग़ज़ल नाम भी सुनने को मिल जाता है।

ग़ज़ल की विषय-वस्तु के बारे में डॉ० चन्द्रकान्त शुक्ल तथा डॉ० दामोदर मिश्र जी काफी कुछ कह चुके हैं। यह ग़ज़ल प्रेमालाप से अपना फैलाव बढ़ाकर सारे मानवीय तथा प्राकृतिक उपादानों को अपने अन्दर समेट चुकी है। यहाँ मैं ग़ज़ल की बनावट के बारे में कुछ कहना चाहता हूँ। ग़ज़ल के एक-एक छन्द या बंद को शेर कहते हैं। इन कई शेरों को मिलाकर ग़ज़ल बनती है। ग़ज़ल के एक-एक शेर परस्पर मुक्त या निरपेक्ष होते हैं। जैसे माला का एक-एक मोती परस्पर निरपेक्ष होता हुआ भी एक धागे में पिरोया होता है, उसी तरह शेर

अलग-अलग होता हुआ भी काफिया और रदीफ के माध्यम से पिरोया होता है। काफिया को हम अन्त्यानुप्रास कह सकते हैं तथा रदीफ को अन्त्यावृत्ति। एक उदाहरण के द्वारा इसे और स्पष्ट किया जा सकता है -

कौमुदीमुदितं सदा नक्तं सुरम्यम् ।
कामिनीवदनं स्मितव्यक्तं सुरम्यम् ।।

यहाँ पहली पंक्ति में 'नक्तं' और दूसरी पंक्ति में 'व्यक्तं' क़ाफ़िया (अन्त्यानुप्रास) हैं। तथा पहली और दूसरी दोनों पंक्तियों में 'सुरम्यं' 'सुरम्यं' रदीफ़ (अन्त्यावृत्ति) हैं। ग़ज़ल के बाकी शेरों में केवल दूसरी पंक्ति में क़ाफ़िया और रदीफ़ दोनों अनिवार्य हैं। कभी-कभी क़ाफ़िये के बिना भी केवल रदीफ़ के सहारे ग़ज़ल कह दी जाती है। वह ग़ज़ल कमजोर होती है। वह वस्तुतः ग़ज़ल न होकर केवल तुकान्तिक कविता हो सकती है। कभी-कभी केवल काफिये पर ही ग़ज़ल के पूरे शेर कह दिये जाते हैं। ऐसी ग़ज़ल शेरों को रदीफ़ के अभाव में सर्वथा एक दूसरे शेरों से निरपेक्ष बनाकर अपनी ग़ज़लियत ही खो बैठती है।

अन्य कविताओं से अलग ग़ज़ल की क्या खूबी है, इस विषय में अनेक विचार पाये जाते हैं। ग़ज़ल का अपना अलग रंग या लहज़ा होता है। ग़ज़ल में एक प्रकार की ऐसी प्रभावोत्पादन क्षमता होती है जो ग़ज़ल के अनुशीलन मात्र से हृदय की तार को निश्चित तौर पर झंकृत कर देती है। वह क्षमता शब्दों के सहज प्रवाह से पैदा होती है, शब्दों में विचार की (अर्थ की) गहराई भी होना आवश्यक है, फलस्वरूप उसमें करिश्मा या लोकोत्तर चमत्कार सहज रूप से मिला हो। संस्कृत के शब्द काव्यवादियों ने जो चमत्कार काव्य स्वरूप निर्धारण में माना है, वही चमत्कार ग़ज़ल के प्राण हैं। वह चमत्कार या करिश्मा ग़ज़ल में सहज प्रवाह से स्वाभाविक रूप में अनुभवगम्य होता है। ग़ज़ल प्रेमी-प्रेमिका के संवाद रूप में पैदा हुई है, अतः ग़ज़ल में बातचीत का अन्दाज आवश्यक है। किसी भी बात को कहने का ढंग या अन्दाज कैसा है, वही ग़ज़ल में चमत्कार उत्पन्न करता है और बहुत सारी बातें तो 'उपोद्घात' तथा 'ग़ज़ल एक दृष्टि' में कह दी गई है, यहाँ मैं पुनः उसे दोहराना नहीं चाहता।

वर्त्तमान संस्करण जो 'ग़लज्जलिकाशतकम्' नाम से हिन्दी अर्थ के

साथ प्रकाशित होने जा रहा है इसका श्रेय डॉ० सीताचरण झा, प्रधानाचार्य, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय, भागलपुर को जाता है। डॉ० सीताचरण झा जी ने संस्कृत की इन ग़ज़लों से प्रभावित होकर सामान्य जन को समझने लायक बनाने के लिए ग़ज़लों का हिन्दी अर्थ साथ-साथ देकर प्रकाशित करने की सलाह दी, साथ ही उन्होंने स्वयं ग़ज़लों का सर्वबोधगम्य हिन्दी अर्थ करने की मुझ से सहमति भी मांगी। मैंने उसे सहज स्वीकार कर लिया । डॉ० झा जी ने बड़े परिश्रम से हिन्दी अर्थ के साथ इस 'ग़लज्जलिकाशतकम्' को अपने सम्पादन में प्रकाशित करबाया है। अतः मैं उनके प्रति आभार व्यक्त करते हुए उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

विवाहपंचमी **आपका**

विक्रमाब्द-२०७० **महेश झा**

Prof. Munishwar Jha

Mahamahopadhyaya, Sahityacharya
M.A. (Double), B.L. President Award Holder
D. Litt. (Paris) & Doctor of Law (Paris)

Former

* Vice-Chancellor, K.S.D. Sanskrit University (Bihar)
* Director of Public Instruction & Education Secretary (Ex-Officio) Govt. of West Bengal
* Prof. & Head of Linguistics & Principal West Bengal Senior Education Service
* Head of the Dept. of Sanskrit T.N.B. College, Bhagalpur University, Bhagalpur.

अनुशंसा

'संस्कृत ग़ज़लमितिनामधेयं पद्यकाव्यं प्रो० महेश झा विरचितं मयाऽवलोकितम् आस्वादितञ्च । काव्यमिदं संस्कृतवाङ्मये नूतनविधां काव्यशैलीमाधृत्य प्रणीतं सुरभारतीकाव्यरसिकानां मनोमोदमावहत् अभिनवरसास्वादमवश्यमेव जनयिष्यति । प्रो० झा महोदयः अत्र काव्ये संस्कृतकाव्यशास्त्रीयानुशासनं निर्वहन् उर्दूभाषादिविश्रुतां काव्यसरणीम् अवलम्ब्य पद्यानि प्रस्तौति । पद्येषु अलंकारादियोजना प्रशंसार्हा प्रतिभाति। रसपरिपाकोऽप्यत्र श्रेयाननुभूयते । समसामयिकविषयाणि कानिचिद् ग़ज़ल-पद्यानि कान्तासम्मित- तयोपदेशवन्ति सन्ति समेषाम् ।

प्रकाशितपूर्वाणि अन्यान्यपि प्रो० झामहोदयकाव्यानि विद्वन्मनोरञ्जन-क्षमाणि गीर्वाणगवीं समृद्धतरां विदधति । इदमपि 'संस्कृत-ग़ज़लम्' सुरभारती समुपासकानां रसज्ञानां विदुषामानन्दसन्दोहं विधास्यतीति कामयमानो विरमति ।

मकरसंक्रांतिः
वि०सं० २०६४

मुनीश्वर झा

उपोद्घात

इल्मे मुसीक़ी का माहिर शायर जब इन्सानी जज़्बात दिल में जज़्ब कर उन्हें रुहानी अलफाज़ की शक्ल में ढालता है तो दुनिया उसे ग़ज़ल का नाम देती है। सदियों से ग़ज़ल आमो ख़ास को अपनी कशिश से मुतअस्सिर करती रही है। ग़ज़ल के साहित्यिक स्वरूप पर विद्वानों की अलग-अलग राय है। ग़ज़ल की लफ़्जी मानी है - 'प्रेयसी से आलाप'। कुछ विचारकों का मानना है कि ग़ज़ल शब्द की उत्पत्ति ग़ज़ाल या ग़ज़ाला शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है- मृगशावक। इसी आधार पर मृगछौने की मदभरी सी चौकड़ी की तरह प्रेम-व्यापार की काव्यात्मक अभिव्यक्ति को ग़ज़ल का नाम दिया गया। मूलतः ग़ज़ल को प्रेमाभिव्यक्ति की काव्यविधा के रूप में स्वीकार किया जाता रहा है। यह प्रेम, यह इश्क, आशिक-माशूका का इश्के-मजाजी हो या आराध्य-आराधक का इश्के हकीकी हो। यह ग़ज़ल के स्वरूप पर एक प्रारम्भिक दृष्टि है। बाद में ग़ज़ल ने इंसानी जिन्दगी के तमाम जज़्बात, प्रेम, श्रद्धा, सुख-दुःख, वियोग, आशा-निराशा, त्याग-बलिदान, समर्पण, शान्ति और क्रान्ति आदि को भी अपने पहलू में समेट लिया।

यद्यपि ग़ज़ल की जन्मभूमि ईरान है, लेकिन इसके विकास और उत्कर्ष में भारतभूमि का महत्त्वपूर्ण योगदान माना जाता है। ग़ज़ल का प्रादुर्भाव अरबी-फारसी में हुआ, लेकिन काल और परिवेश के बदलते स्वरूप में ग़ज़ल ने अपने आपको ढाल लिया। अरबी-फारसी के बाद उर्दू में लिखी ग़ज़लों ने शोहरत की बुलन्दियों को छुआ। अब तो ग़ज़ल उर्दू ही नहीं, तमाम भारतीय भाषाओं में भी कही जा रही है। इंगलैण्ड के अनेक कवि मसलन ब्रियान हेनरी, डेनियल हॉल और शेरोन ब्रियान जैसे बाकायदा अंग्रेजी में ग़ज़लें कह रहे हैं। मुम्बई से प्रकाशित उर्दू पत्रिका 'शाइर' ने इनकी ग़ज़लें प्रकाशित की है।

यों तो ग़ज़ल अपनी शुरूआत में शाहंशाही की कसीदों, हुस्नों-शबाब, जामो-मीना और माशूका के नाजों-नखरों तक महदूद रही, लेकिन हिन्दुस्तानी

आवाज़ में ग़ज़ल अमीर खुसरो की –

'सखी पिया को, जो मैं न देखूँ, तो कैसे काटूँ, अँधेरी रतियाँ
किसे पड़ी है, कि जो सुनाबे, पियारे पी को, हमारी बतियाँ'

जैसी प्यार भरी आवाज से शुरू होकर 'एको रसः करुण एव' के प्रयोक्ता 'मीर' के दर्द भरे अल्फाज़ में ढली। गालिब और इक़बाल की वैचारिक बुलन्दियों ने ग़ज़ल का इक़बाल बुलन्द किया। बहादुरशाह ज़फर ने ग़ज़ल को राष्ट्रीयता का लिवास दिया। बाद में यही ग़ज़ल हिन्दुस्तानी इक़बाल की आतिश अंग्रेज आवाज बनकर रामप्रसाद बिस्मिल के स्वर में पुकार उठी –

'सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।
देखना है जोर कितना बाजुए क़ातिल में है' ।।

फिराक ने इसके गुलशन को अपने गुले नगमा से बहार की खूबसूरती अता की। हिन्दी की दुनिया में ग़ज़ल दुष्यन्त कुमार की आवाज़ में उतरकर आम आदमी की आवाज़ बन गयी। दुष्यन्त ने ग़ज़ल के बदले-बदले पैरइन आवाज़ को कुछ यों ढाला कि हम कहते फिरे –

'कौन कहता है कि आसमाँ में सूराख नहीं हो सकता।
एक पत्थर तो तबीयत से उछालो यारो' ।।

वस्तुतः ग़ज़ल चंद लफ़्जों की ही जादूगरी है। ग़ज़ल को परिभाषित करता एक शेर यों है –

'हमसे कोई पूछे ग़ज़ल क्या है, ग़ज़ल का फन क्या है ?
चंद लफ़्जों में कोई आग छुपा दी जाए' ।।

हिन्दुस्तान में प्रवहमान ग़ज़ल की सरिता भला देववाणी की सुरसरिता से अछूती कैसे रहती ? संस्कृत में ग़ज़ल की परम्परा को लोग नया समझते हों, पर ग़ज़ल और ग़ज़ल की बहर से संस्कृत का नाता बहुत पुराना है। ग़ज़ल की संरचना पर दृष्टि डालने से मालूम होता है कि ग़ज़ल के शेरों में संस्कृत श्लोक के चरणों की तरह मिसरा होता है। फर्क यह है कि श्लोकों में चार चरण होते हैं, जबकि शेरों में दो मिसरे होते हैं। ग़ज़ल के सारे शेरों में एक ही रदीफ़ और क़ाफ़िए होते हैं। रदीफ़ और क़ाफ़िया हम-वज़न अल्फाज़ हैं जो शेर के आख़िर में कहे जाते हैं।

छन्द की दृष्टि से ग़ज़ल शास्त्र संस्कृत छन्दः-शास्त्र का ऋणी है। उर्दू ग़ज़लों की बहरें बुनावट की दृष्टि से संस्कृत के छन्दों के बहुत करीब हैं। वस्तुतः यह सामीप्य संस्कृत छन्दःशास्त्र की ही देन है। ख्वाब अकबराबादी ने उर्दू ग़ज़ल शास्त्र के विवेचन के क्रम में लिखा है कि फारसी के छन्दों का निर्माण खलील बिन अहमद बखरी (७३१-७८७) ने संस्कृत के छन्दों की नींव पर किया था।

संस्कृत के छन्दों में इनका साम्य देखा जा सकता है- यथा, संस्कृत में,

'नमामीशमीशान निर्वाणरूपम्
विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपम् ।'

उर्दू में,

'अजी रूठ के अब कहाँ जाइएगा
जहाँ जाइएगा हमें पाइएगा ।'

अथवा,

'बना के फकीरों का हम भेस गालिब
तमाशा ए अहले करम देखते हैं ।'

श्लोक में भुजंगप्रयात छन्द ऐसा होता है जिसमें क्रमशः चार यगण होते हैं। यगण का स्वरूप होता है - ISS, उर्दू के दोनों शेरों में जो बहर या छन्द है, वह है - बहरे मुतकारिब, जिसका स्वरूप है - फ़ऊलुन, फ़ऊलुन, फ़ऊलुब, फ़ऊलुब। यह फ़ऊलुन संस्कृत के यगण के वजन का है। ऊपर लिखे श्लोक और शेर में ऐसा छान्दस साम्य है जिसमें तनिक भी स्वरभेद प्रतीत नहीं होता है।

यथा;

'नमामीशमीशाननिर्वाणरूपम्
अजी रूठ के अब कहाँ जाइएगा
बना के फकीरों का हम भेस गालिब
विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपम् ।

इसी तरह शिवताण्डवस्तोत्र की ये पंक्तियाँ -

'जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले
गलेऽवलम्बलम्बितां भुजंगतुंगमालिकाम् ।'

तथा उर्दू का शेर -

पुकारता चला हूँ मैं गली-गली बहार की
बस एक छाँव जुल्फ की बस इक कली बहार की।

संरचनात्मक दृष्टि से दुर्गा सप्तशती के श्लोकों में उर्दू ग़ज़लों की तरह तदीफों का सुन्दर प्रयोग दीखता है -

'या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।
या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः' ।।

अथवा -

'शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तुते ।
हंसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि
कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तुते' ।।

जिस प्रकार ग़ज़ल दिली जज़्बात की मादकता को अभिव्यक्त करने वाला मधुमय चषक है तो उसी प्रकार संस्कृत के गीतिकाव्यों ने हृदय की तरलतर भावनाओं को अभिव्यक्ति दी है जिनमें मेघदूत, गीतगोविन्द, अमरुकशतक जैसे काव्य अग्रणी हैं । इन काव्यों में गुम्फित भावनाएँ ग़ज़लों में जज़्ब भावनाओं से अपूर्व साम्य रखती है । यद्यपि इनमें भावात्मक साम्य है, पर संरचना की दृष्टि से थोड़ी भिन्नता है। गीतिकाव्य की गीतियाँ अधिकांशतः परस्पर सम्बद्ध होती हैं या एक कथासूत्र को लेकर चलती हैं, लेकिन ग़ज़ल के शेरों का आपस में सम्बद्ध होना आवश्यक नहीं । ग़ज़लें मुक्तक काव्य से परम्परया साम्य रखती है।

वास्तव में ग़ज़ल और गीति दोनों ही हृदय की वस्तु है । यह एक ऐसा रेखाचित्र है जिसकी अभिव्यक्ति का माध्यम गिनी चुनी चन्द लकीरें हैं । ग़ज़लकार या गीतिकार उन लकीरों का मनमाना प्रयोग नहीं कर सकता । एक रेखा कम हुई कि चित्र में अधूरापन झाँकने लगता है और एक रेखा अधिक हुई तो कृति विकृति के दायरे में आ जाती है । अभिप्राय यह है कि ग़ज़लकारों को

शब्द-प्रयोग में अत्यधिक सतर्क और सचेष्ट रहना पड़ता है।

संस्कृत में उर्दू-फारसी की तरह ग़ज़लगोई की परम्परा को अपनी रचनाओं से सँवारने वाले आधुनिक कवियों में बच्चूलाल अवस्थी, जगन्नाथ पाठक, अभिराज, राजेन्द्र मिश्र, इच्छाराम द्विवेदी आदि उल्लेखनीय हैं। इसी तरह कवयित्रियों में पुष्पा दीक्षित, सिम्मी कन्धारी, महाश्वेता चतुर्वेदी आदि ने भी उर्दू में प्रचलित ग़ज़लों का प्रयोग किया है। संस्कृत ग़ज़लों अथवा गज्जलिकाओं में भी उर्दू ग़ज़लों की तरह दो-दो पंक्तियों के शेरों में सुन्दर अर्थों का सन्निवेश है। इच्छाराम द्विवेदी के चन्द शेर हैं -

ओषणं याचते सत्वरं या व्रणे
सा चमत्कारिणी वीरता कीदृशी
सङ्गरे भीरुता यच्च मध्येसभं
वाचिकी शूरता शूरता कीदृशी
कज्जलं चोरितं हन्तं नेत्रस्थितम्
कीदृशं चापलं दक्षता कीदृशी

डॉ० पुष्पा दीक्षित के कतिपय शेर इस दृष्टि से द्रष्टव्य हैं -

'मम निश्चलशुभ्रजले हृदये नवरूपमिदं प्रतिबिम्बयुतं
मलिने मुकुरे भवतो हृदये मम रूपमिदन्नहि संक्रमितम्।
'मम शान्तमिदं निभृतं सुखितं
हृदयस्य गृहं ज्वलितं ज्वलितम्'

इधर उर्दू के ग़ज़लों का संस्कृत भाषा में अनुवाद भी चल रहा है। यह अनुवाद भी ग़ज़ल कहने की अपूर्व क्षमता को प्रदर्शित करता है।

गालिब का शेर है -

'उनके देखे से जो मुँह पे आती है रौनक
वो समझते हैं कि बीमार का हाल अच्छा है।'

इसका संस्कृत अनुवाद है -

'तद्विलोकनेन मुखे कान्तिरुपायाति यदा
स विजानाति हि रूग्णस्य दशा श्रेष्ठाऽस्ति।'

वस्तुतः दिलों के जज़्बात भाषायी पैरइन को नहीं देखते, अतः ग़ज़ल की विधा तमाम भाषाओं में अपनी रौनक बिखेर रही है और संस्कृत भी उनमें एक है। प्रो० महेश झा का नाम, संस्कृत अदब में प्रसृत इस ग़ज़ल की खूबसूरती निखारने वालों, इसके गुलशन में खुशबू बिखेरने वालों में शुमार है। उनकी अनेक काव्य-कृतियाँ सहृदयों को आनन्दित कर रही हैं। यह नूतन कृति भी सामाजिकों को उद्वेलित करने में निश्चित रूप से समर्थ होगी।

मुझे उम्मीद है कि मित्रवर प्रो० झा के ग़ज़लिस्तान के कूया-ए-मोहब्बत में बदहवास, दुःखी, श्रमार्त अपनी ही तेजरफ़्तारी से घबड़ाये हुए उन तमाम लोगों को आनन्द मिलेगा, अपनी आरजुओं का, अपने जज़्बात का अक्स प्रतिबिम्बित मालूम होगा।

चन्द्रकान्त शुक्ल 'भास्कर'
एम०ए० (संस्कृत-हिन्दी), साहित्याचार्य, पी-एच०डी०, डी०लिट्
पूर्व प्रतिकुलपति एवं कुलपति, कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा
विश्वविद्यालय प्राचार्य, संस्कृत विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची - ८३४००८, झारखंड

ग़ज़ल : एक दृष्टि

'ग़ज़ल' शब्द के कई अर्थ हैं - (१) महबूब (प्रेमी) से बातें करना, औरतों की बातें करना, औरतों से बातें करना, आदि । इन अर्थों को देखने से प्रतीत होता है कि ग़ज़ल कोमल भावनाओं को व्यक्त करने की शैली का नाम है। स्त्रियाँ कोमल स्वभाव की होती हैं । उनकी भावनाएँ भी कोमल होती हैं, चाहे वह भावना 'विसाले यार' या 'हिज्रे यार' से मुतल्लिक ही क्यों न हों । संस्कृत में शृंगार के दो प्रकार हैं - (१) संयोग शृंगार और (२) विप्रलम्भ या वियोग शृंगार । संस्कृत का संयोग शृंगार ही 'विसाले यार' की इश्क़िया दास्तान है और विप्रलम्भ शृंगार अर्थात् वियोगशृंगार जिसे उर्दू में 'हिज्रे यार' के जज्बा से जोड़कर देख सकते हैं। बिना वियोग का संयोग पुष्ट नहीं होता -

''न बिना विप्रलम्भेन संयोगः पुष्टिमश्नुते ।''

तभी हिन्दी कवि पन्त ने भी कहा -

'मिलन अन्त है मधुर प्रेम का और विरह जीवन है।'

मूलतः इश्क़िया बातें बयान करने के लिए ही ग़ज़ल की इजाद हुई । हालाँकि धीरे-धीरे इसमें इसेरी मजामिनें भी दाख़िल होती गयीं और आज कहने की यह स्थिति बन गयी है कि प्रायः सभी प्रकार की बातें कही जा सकती हैं। ग़ज़ल ने जो अभिव्यक्ति की लोकप्रिय ऊँचाई प्राप्त की है, वह कसीदा, रुबाई, मस्नवी, वगैरह को नसीब नहीं है । ग़ज़ल की शुरुआत कसीदा से हुई । प्राचीन अरबी शायरी में कसीदा के प्रारम्भ में कुछ शेर माशूक की याद में या 'मौसिमे बहार' के आगमन वगैरह पर लिखे जाते थे । उन शेरों को 'तशबीन' कहा जाता है । धीरे-धीरे 'तशबीब' के मज़ामिन पर आधारित शेर कसीदे के अतिरिक्त आजादाना भी कहे जाने लगे और इस तरह 'ग़ज़ल' अस्तित्व में आयी ।

इस्लाम से पहले ही अरबी में एक शायरी सत्ता में आयी थी जिसे अज़री कहा जाता था । यह शायरी 'अजरी' नाम के एक कबीला (सम्प्रदाय, खानदान) में बहुत लोकप्रिय हुई थी क्योंकि इस अजरी की खोज अजरियों ने ही की थी । इस शाइरी को 'ग़ज़ल' नहीं कहते थे लेकिन इसमें ग़ज़ल की सारी

खूबियाँ मौजूद थीं। नज़्म में हर शेर अलग-अलग मज्मूनों का होता था, पहला शेर मतला हमकाफिया होता था और हर नज़्म में पाकीजा मुहब्बत के दर्द भरे मजामिन होते थे। ग़ज़ल की यह विशेषता है कि इसमें प्रायः विरह, तन्हाई और दर्दमन्दी की ही बातें बयान की जाती है।

ग़ज़ल के शेरों में अलग-अलग मज्मून बयान करने की रस्म को कुछ लोगों ने अन्यथा माना है तो कुछ लोगों ने इसे जायज करार दिया है; क्योंकि पूरी ग़ज़ल का एक मिजाज या कैफियत तो होती है। बाद में लोगों ने यह भी कहा कि ग़ज़ल में सम्बन्धित माबूत मजामीन बयानल करने की भी गुंजाइश है। यानि शाइर अगर चाहे तो पूरी ग़ज़ल में एक ही बात को फैला कर कहे - इसे 'ग़ज़ल मुसलसल' कहते हैं या शाइर अगर चाहें तो ग़ज़ल के अन्दर कलमा डाल दें, जिसके अशआर सम्बद्ध होते हैं। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि ग़ज़ल का हर शेर एक पूरी जनम के बराबर होता है बल्कि अच्छा शेर तो एक अच्छी नज़्म से बढ़ भी जाता है।

ग़ज़ल के विरोध में जो बातें कही जाती हैं वह बिल्कुल अनर्गल हैं, क्योंकि यह बात किसी तरह की सिद्ध नहीं हो पायी है कि ग़ज़ल के अशआर का अलग-अलग होने में कोई बुराई है। बात यह है कि नज़्म के उसूलों को ग़ज़ल पर इस्तेमाल करना अनुचित है। हर विधा के अपने-अपने ढंग होते हैं, किसी एक विधा के ढंग को दूसरी विधा के लिए आवश्यक नहीं समझना चाहिए और अगर ऐसा किया ही जाये तो हमें यह कहने से कौन रोक सकता है कि चूँकि नज़्म में ग़ज़ल की तरह अलग-अलग शेर नहीं होते इसलिए नज़्म कमतर सिन्फे सुखन है।

यह बात सौ फीसदी सच है कि ग़ज़ल सारी दुनिया की शाइरी में लासानी और सबसे ज्यादा लचकदार सिन्फे सुखन है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि दुनिया की शाइरी में किसी भी सिन्फे का ऐसा वजूद नहीं जिसमें ग़ज़ल की मानिन्द बह्रवहूर और रदीफ़ (शेर का अन्तिम शब्द) व काफ़िया का एकत्व हो लेकिन हर शेर अपना वजूद भी रखता हो। ग़ज़ल की यह सिफत निहायत कीमती है।

यह तो तय है कि ग़ज़ल की शुरूआत अरबी शाइरी के असर से हुई और फ़ारसी शाइरों ने ग़ज़ल को वाकई ग़ज़ल बनाया। ११वीं सदी के आते-आते ग़ज़ल एक प्रसिद्ध और मजबूत सिन्फे सुखन बन गई। फारसी के जरिये यह कई भाषाओं तक पहुँची जिसमें तुर्की और उर्दू सबसे ज्यादा प्रमुख हैं। १९वीं सदी के कुछ जर्मन शाइरों ने भी इसे कबूत किया और वहाँ यह Ghasel के नाम से कई बड़े शाइरों में मकबूल हुई और आज तो हिन्दुस्तान की कई भाषाओं में ग़ज़ल लिखी जा रही हैं।

आज यह सिन्फ संस्कृत और हिन्दी में भी धड़ल्ले से फैल रही है और इसे संस्कृत के मूर्धन्य आशु कवि डॉ० महेश झा जी (सेवानिवृत प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष, विश्वविद्यालय संस्कृत विभाग, तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर) ने बड़ी सफलता के साथ अंजाम दिया है। उनकी कई पुस्तकें इस सिन्फ में साया हो चुकी हैं।

फिलहाल उनका कलम अरबी भाषा में निबद्ध पवित्र किताब 'कुरआन शरीफ' के अनुवाद करने में मशगूल है। पवित्र पुस्तक 'कुरआन शरीफ' का बाजाप्ता स्नानादि से पवित्र होकर ध्यान से पढ़कर फिर संस्कृत और हिन्दी में जो तर्जुमा किया है उसमें मौलिकता की कमी महसूस नहीं होती और सबसे ज्यादा उस अनुवाद को आकर्षक बनाया है ग़ज़ल की सिन्फे सुखन ने। डा० झा इस सिन्फ में माहिर हैं और बिम्ब-निर्धारण में कल्पना के धनी महेश जी का कोई सानी नहीं। 'वसन्त' नामक उन्वान से जो ग़ज़ल उन्होंने कही है वह उन्हें संस्कृत और हिन्दी के पायेदार शाइर सिद्ध करते हैं। संस्कृत ग़ज़ल लेकर डॉ० महेश झा को अगर हम उर्दू के ख्वाजा मीर दर्द (१७२०-१७८४), मीर तकी मीर (१७२४-१८१०) कहें तो कोई आपत्ति नहीं होगी; क्योंकि डॉ० महेश भी मीर तकी मीर के इस राय से सहमत हैं कि -

'मुझको शाइर न कहो मीर कि साहब मैंने
दर्द-व-गम कितने किये जमा तो दीवान किया।"

इनका दिल-व-दिमाग रूमानियत से भरा है और यही वजह है कि ये हिज्र और तन्हाई के दर्द को अपनी शाइरी में बखूबी पिरोते हैं जो दर्द हर पाठक

को अपना दर्द लगता है । हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि इनकी ग़ज़ल (अनुवाद की) तमाम दुनिया को रास आये और इस दिशा में इतनी तरक्की करे कि यह मील का पत्थर साबित हो ।

प्रो० (डा०) दामोदर महतो

पूर्व अध्यक्ष : बिहार संस्कृत शिक्षा बोर्ड, पटना

पूर्व प्राचार्य : आर०डी०एण्ड डी० जे० कॉलेज, मुंगेर

प्राचार्यः स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, ति०मां०विश्वविद्यालय, भागलपुर।

संस्कृत ग़ज़लम्

(१)

नवजलधररुचि भाति शरीरम् ।
गोपवधूरनुयाति शरीरम् ।।१।।
गोपकुलैरनुगतमनुदिवसम् ।
विस्मयमति विदधाति शरीरम् ।।२।।
पीतवसनधिक्कृतमदनाभम्
कामिह मुदं ददाति शरीरम् ।।३।।
सुचिरविराजितमनुपमशोभम् ।
नूतनता न जहाति शरीरम् ।।४।।
सुरद्रुमालम्बि प्रमदानाम् ।
वसनमलं मुष्णाति शरीरम् ।।५।।
वेणुविभूषितकरमतिहृद्यम् ।
विश्वव्यापि चकास्ति शरीरम् ।।६।।
समरे कृतपाण्डवसाचिव्यम् ।
गीतामृतमनुशास्ति शरीरम् ।।७।।

भावार्थ-नए मेघ की कान्तिवाला शरीर (शरीरधारी कृष्ण) शोभ रहा है। वह कृष्ण गोपियों का अनुगम कर रहा है।।१।।

ग्वालबालों के द्वारा प्रतिदिन पीछा किया जाता हुआ वह कृष्ण अतिशय चमत्कार कर रहा है ।।२।।

पीलेवस्त्र धारण कर लेने से कामदेव की कान्ति को तिरस्कृत करने वाला वह शरीर (कृष्ण) किसी अनिर्वचनीय आनन्द को दे रहा है ।।३।।

वह अतुलनीय शोभा वाला शरीर अतिप्राचीन काल से विराजमान होने पर भी अपनी नवीनता नहीं छोड़ता।।४।।

कदम्ब पर लटका हुआ वह शरीर नायिकाओं (गोपियों) का वस्त्र बहुत

चुराता है ।।५।।

मुरली से सुशोभित हाथ वाला अतिमनोहर वह शरीर सर्वत्र व्याप्त होकर चमक रहा है ।।६।।

महाभारत युद्ध में पाण्डव की सहायता करने वाला वह शरीर गीतारूप अमृतोपदेश कर रहा है।।७।।

ooooo

(२)

जगन्ति पाति लीलया कृष्णः ।
समं विभाति राधया कृष्णः ।।१।।
नवीननीरदोपमो मुग्धा -
मनो हरेन्मुखश्रिया कृष्णः ।।२।।
स बर्हभूषितालकोऽनल्पम् ।
विभासते तनुत्विषा कृष्णः ।।३।।
तदीयपाणिशोभिता वंशी ।
पुनश्च शोभते तया कृष्णः ।।४।।
कलङ्क ओषधीशकौमुद्या ।
यथास्ति पीतवाससा कृष्णः ।।५।।
कलिन्दनन्दिनीतटाभोगे ।
बभौ सयूथमुग्धया कृष्णः ।।६।।
किमद्य नो ह्यनेकपार्थानाम् ।
हरेद् भ्रमं स गीतया कृष्णः ।।७।।

भावार्थ - कृष्ण अपनी लीला से अथवा खेल-खेल में सारे जगत् की रक्षा करते हैं। कृष्ण राधिका के साथ शोभते हैं ।।१।।

अपने मुख की शोभा से गोपियों के मन को नये मेघ के समान कृष्ण हरते हैं ।।२।।

वह मोर पंख से अलंकृत केश वाले कृष्ण अपने शरीर की कान्ति से अत्यन्त चमकते हैं ।।३।।

उनके हाथ से मुरली शोभित होती है, और फिर उससे (मुरली से) कृष्ण शोभित होते हैं ।।४।।

चन्द्रमा की किरण से जैसे कलङ्क शोभित होता है वैसे ही पीले वस्त्र से कृष्ण शोभायमान हैं ।।५।।

यमुना नदी के किनारे गोपबालाओं के झुण्ड के साथ कृष्ण सुशोभित होते थे ।।६।।

वे कृष्ण आज क्यों नहीं अर्जुन बने अनेक वीर युवाओं के भ्रम को गीतोपदेश से दूर करते ? ।।७।।

ooooo

(३)

श्यामलो गलदेश एष भवेश सुभगः ।
भाति मे गिरिजाक्षिकज्जललेश सुभगः ।।१।।
श्यामघनतुल्यो गलो गिरिश प्रशस्तः ।
दर्शनेन वितीर्णशुभसन्देशसुभगः ।।२।।
पार्वतीभुजलता यत्र तडिद् घनान्तः ।
चारुतरमतिशोभते स उमेश सुभगः ।।३।।
भूतिसितवपुषि स्फुरितशितिकण्ठ एषः ।
लग्ननीलमणिर्यथा गङ्गेश सुभगः ।।४।।
भाति कण्ठोऽसितः प्रमथानां समर्या-
धूपधूमकुसङ्गिचिह्न इवेश सुभगः ।।५।।

भावार्थ - हे भवेश ! (शिव) तेरा श्याम वर्ण वाला यह कंठ सुन्दर है, मुझे (आलिंगनादि के समय) यह पार्वती की आँख का काजल का कुछ अंश लगा हुआ सा प्रतीत होता है ।।१।।

हे शिव ! काले मेघ के समान कंठ विख्यात है जो अपने दर्शन से शुभ सन्देश बाँटता है ।।२।।

हे उमेश ! जिस कंठ भाग में (आलिंगन के समय) गौरी का बाहुपाश

मेघ के मध्य बिजली जैसा है इसलिए वह सुभग गलप्रदेश और अधिक शोभायमान हो जाता है।।३।।

भस्म से श्वेत शरीर में यह चमकता हुआ नील कंठ नीलमणि (नीलम) लगा हुआ जैसा सुन्दर प्रतीत होता है।।४।।

यह नीला कंठ (अपने गण) प्रमथ के पूजन के धूप के धुआँ से काले चिह्न की भाँति सुन्दर प्रतीत होता है।।५।।

ooooo

(४)

बुद्धिवैशद्यमाप्तुं पठेत्संस्कृतम् ।
सौख्यसौविध्यमाप्तुं पठेत्संस्कृतम् ।।१।।
जानकीजानये कल्पते यत्प्रियम् ।
तद्धि रामायणं संश्रयेत्संस्कृतम् ।।२।।
भक्तिमुक्तिप्रदं शक्तिरक्तिस्वरम् ।
लोकसंवादमूलं भवेत्संस्कृतम् ।।३।।
कामवामासमानाङ्गनासङ्गम-
स्वादमाधातुकामः श्रयेत्संस्कृतम् ।।४।।
बंगहिन्दीतमिलतेलुगूकन्नड़-
सर्वभाषाविवादे जयेत्संस्कृतम् ।।५।।
विश्वबन्धुत्वसंस्थापनार्थाय भो ।
विश्वमञ्चे समुद्घोषयेत्संस्कृतम् ।।६।।
सर्वसंस्कारसम्पादनाय क्षमम् ।
सद्विकासाय किं नाश्रयेत्संस्कृतम् ।।७।।
कृष्णगीतोपदेशामृतस्वाददम् ।
सर्वलोकप्रियं सम्पठेत्संस्कृतम् ।।८।।

भावार्थ - बुद्धि को साफ-सुथरा करने के लिए संस्कृत पढ़ें। सुख-सुविधा पाने के लिए संस्कृत पढ़ें ।।१।।

राम को जो प्रिय है, वह रामायण भी मूलतः संस्कृत पर ही आश्रित है। अर्थात् मूल रामायण वाल्मीकि रामायण है, जिसकी भाषा संस्कृत है ।।२।।

यह संस्कृत विद्या भक्ति और मुक्ति देने वाली, शक्ति और प्रेम देती है, वह संस्कृत लोगों के बीच बातचीत का आधार बने।।३।।

यदि कामदेव की पत्नी रति के समान सुन्दर नारी के साथ संगम का आस्वाद लेने की इच्छा हो, तो संस्कृत का आश्रय लें।।४।।

बंगला, हिन्दी, तमिल, तेलुगू, कन्नड़ आदि सभी भारतीय भाषा के विवाद में संस्कृत भाषा की विजय सुनिश्चित है ।।५।।

विश्वबन्धुत्व को स्थापित करने के लिए विश्वमंच पर संस्कृत की उद्घोषणा करें । संस्कृत के माध्यम से सारे विश्व में विश्वबन्धुत्व (मैत्री) स्थापित हो सकता है ।।६।।

सभी तरह के संस्कार को पूरा करने में समर्थ संस्कृत है, तो फिर सुन्दर विकास के लिए संस्कृत का आश्रय क्यों नहीं लिया जाए ? ।।७।।

कृष्ण के गीतोपदेशरूप अमृत की स्वाद चखाने वाली संस्कृत है, जो सबलोगों का प्रिय है, ऐसी संस्कृत अवश्य पढ़ें।।८।।

ooooo

(५)

श्रूयतामभिनवं भव्यं प्रकृतिगीतम् ।
काननोपवनेषु नव्यं प्रकृतिगीतम् ।।१।।
प्रावृषि द्रुमपल्लवेषु पतन्त एते ।
विन्दवो रचयन्ति रम्यं प्रकृतिगीतम् ।।२।।
पल्वलेषु नवाम्बुभिर्मण्डूकसङ्घाः ।
श्रावयन्ति लयेन बद्धं प्रकृतिगीतम् ।।३।।
षट्पदा विनिपीय मधु पुष्पेषु मत्ताः ।
निर्भरं गायन्त्यशब्दं प्रकृतिगीतम् ।।४।।
कोकिलाः सहकारशाखासन्निविष्टाः ।

सुस्वरं कूजन्ति हृद्यं प्रकृतिगीतम् ॥५॥
व्योम्नि घनसङ्कुले स्तनितान्यानिशम्य ।
बर्हिणोऽनुसरन्त्यनल्पं प्रकृतिगीतम् ॥६॥
कौमुदीमुदिते नदीमन्दप्रवाहे ।
तरत्रौपोतानुगुञ्जं प्रकृतिगीतम् ॥७॥
वान्ति वाता लतापादपशिखासक्ताः ।
कुर्वते कमनीयरागं प्रकृतिगीतम् ॥८॥
प्रभाते प्राचीमुखेऽरुणिते समोदम् ।
पक्षिणामिह कलस्वानं प्रकृतिगीतम् ॥९॥
शस्यसम्पन्नोर्वरे केदारखण्डे ।
वातधुतशस्यानुगुञ्जं प्रकृतिगीतम् ॥१०॥
कीचका अनिलोद्धता वनवाटिकासु ।
कुर्वते मृदु वेणुनादं प्रकृतिगीतम् ॥११॥
शैलशिखरेभ्यः पतद्वारिप्रपाताः ।
श्रावयन्ति सुतालबद्धं प्रकृतिगीतम् ॥१२॥
अन्धतमसे अमाया विपिने उलूकाः ।
दुःश्रवं कुर्वन्ति हुँ हुँ प्रकृतिगीतम् ॥१३॥
कानने रजनीमुखेषु शृगालसङ्घाः ।
कुर्वते ह्यशिवं विरावं प्रकृतिगीतम् ॥१४॥
चन्द्रिकाधवलेऽम्बरे ध्वनिवर्जितेऽपि ।
स्पन्दते पुनरेव मौनं प्रकृतिगीतम् ॥१५॥
स्रोतसा तरसा नदी रमणीव कान्तम् ।
याति गायन्ती मनोज्ञं प्रकृतिगीतम् ॥१६॥
साम सर्वे संविदुः सङ्गीत-मूलम् ।
वेद्मि तस्यापि प्ररोहं प्रकृतिगीतम् ॥१७॥

भावार्थ – अभिनव सुन्दर या विशाल प्रकृति-गीत सुनें । वन-वाटिकाओं में नवीन प्रकृति-गीत सुनें ॥१॥

वर्षाकाल में वृक्ष के पल्लवों पर पड़ रही ये बूँदें मनोहर प्रकृति-गीत की

रचना कर रही हैं ।।२।।

गड्ढों में नये (वर्षा के) पानी से ये मेढक के झुण्ड सुर मिलाकर प्रकृति-गीत सुना रहे हैं ।।३।।

फूलों पर पुष्प रस-पान से नशे में चूर भौंरे लीन होकर शब्दरहित प्रकृति-गीत गा रहे हैं ।।४।।

कोयल आम के वृक्षों पर बैठकर सुन्दर सुर में मनोहर प्रकृति-गीत गुंजित कर रहे हैं ।।५।।

मेघ से भरे आसमान में गर्जनों को सुनकर मोर बहुत अधिक प्रकृति-गीत का अनुसर कर रहे हैं ।।६।।

चान्दनी से चमकते नदी के मन्द प्रवाह पर तैरते नाव और पोत का अनुगुँज प्रकृति-गीत है ।।७।।

लता और पेड़ की डाल से टकराई हुई हवाएँ बह रही हैं, जो प्रकृति-गीत को सुस्वर बना रही हैं ।।८।।

सुबह को लाल पूरब दिशा के मुख पर खुशी से चिड़ियों की मीठी आवाज प्रकृति गीत है ।।९।।

फसल से भरे खेत में हवा से डोलती फसलों का अनुगुंज प्रकृति-गीत है ।।१०।।

वन-उपवनों में बाँस हवा से टकराकर मधुर मुरली की धुन कर रहे हैं। वह प्रकृति-गीत है ।।११।।

पर्वत के शिखरों से गिरते हुए झरने सुन्दर ताल और सुर से निबद्ध प्रकृति-गीत सुना रहे हैं ।।१२।।

अमावस के घने अन्धकार में [illegible] ने उल्लू भयावह "हुँ हुँ" प्रकृति-गीत कर रहे हैं ।।१३।।

वन में शाम को अनेक सियार के झुंड अशुभ आवाज़ वाला प्रकृति-गीत कर रहे हैं ।।१४।।

चाँदनी से धवल निःशब्द आसमान में भी चुपचाप प्रकृति-गीत स्फुरित हो रहा है ।।१५।।

नदी (अपने) तीव्र वेग से सुन्दर सागर से मिलने मनोहर प्रकृति-गीत

गाती वैसे ही जा रही है, जैसे रमणी अपने प्रियतम से मिलने जा रही हों ।।१६।।

सबलोग सामवेद को संगीत का मूल मानते हैं, किन्तु मैं तो उस साम का भी, उद्गम प्रकृति-गीत को मानता हूँ ।।१७।।

ooooo

(६)

विनाशं बहूनां जनानां सुनामी ।
विलोपं व्यधात्साधनानां सुनामी ।।१।।
भुवः कम्पनोद्भूतवेगप्रवृद्धम् ।
दधाति प्रकर्षं जलानां सुनामी ।।२।।
न पुष्पावलेः केवलं तीरदेशे ।
विधत्ते लयं कुड्मलानां सुनामी ।।३।।
वनोद्यानहर्म्योटजानां समन्तात् ।
तनोति क्षतिं पादपानां सुनामी ।।४।।
नयन्ती क्षयं योषितामर्भकाणा -
मुपेता वयःपूरितानां सुनामी ।।५।।
य आस्ते च मर्यादयाब्धिस्तमेव ।
विधत्ते गुरुं दुर्मदानां सुनामी ।।६।।
तनोति प्रभूतक्षतिं तीरजानाम् ।
विशेषक्षयं धीवराणां सुनामी ।।७।।
हरत्यर्थमर्थागमं साहसं च ।
समुद्रान्तिके जीवितानां सुनामी ।।८।।

भावार्थ - सुनामी (सामुद्रिक तूफ़ान) ने बहुतों का विनाश किया। सुनामी ने साधनों को समाप्त किया ।।१।।

पृथ्वी के कम्पन से उत्पन्न अतिशय वृद्धि को प्राप्त जलों के उत्कर्ष को सुनामी धारण कर लेती है ।।२।।

(समुद्र के) किनारे के पुष्प समूह को ही नहीं, अपितु कलियों का भी विध्वंस सुनामी कर देती है ।।३।।

सुनामी वन, उपवन, महल, कुटी और वृक्षों का भी नाश चारों ओर कर

देती है ।।४।।

सुनामी औरतों, बच्चों तथा बूढ़ों को नाश करती हुई समीप आ पहुँची ।।५।।

अपनी मर्यादा (सीमा के अन्दर) में जो समुद्र रहता है, उसे भी दुष्टों का गुरु सुनामी बना देती है ।।६।।

किनारे के लोगों का तो बहुत नुकसान करती है ही, यह सुनामी मल्लाहों को विशेष नुकसान पहुँचाती है ।।७।।

यह सुनामी समुद्र के समीप जीवित जनों का भी धन, धन का स्रोत तथा साहस हर लेती है ।।८।।

ooooo

(७)

कौमुदीमुदितं सदा नक्तं सुरम्यम् ।
कामिनीवदनं स्मितव्यक्तं सुरम्यम् ।।१।।
यामिनीतमसा शुचा परिदूयमानम् ।
प्रभाते प्राचीमुखं रक्तं सुरम्यम् ।।२।।
सङ्गमे प्रथमे तरुण्या भूषिताङ्ग्याः ।
प्रियं गच्छन्त्याः पदालक्तं सुरम्यम् ।।३।।
व्यञ्जनं सुस्वादु बङ्गीय प्रजानाम् ।
समत्स्यं प्रियभोजने भक्तं सुरम्यम् ।।४।।
स्तन्यपानं कुर्वतः किल शिशोरास्यम् ।
सस्मितं मातुर्हृदासक्तं सुरम्यम् ।।५।।
कामिनीजनचञ्चलापाङ्गेक्षणेऽपि ।
योगिनः शुचि मनोऽनासक्तं सुरम्यम् ।।६।।
वक्रबन्धे कविव्यापारे सदर्थे ।
साधुरमणीये पदं शक्तं सुरम्यम् ।।७।।
पर्वणि ग्रसितं विरूपं दूयमानम् ।
विम्बमिन्दो राहुणा त्यक्तं सुरम्यम्।।८।।

भावार्थ – चाँदनी से सुहानी रात हमेशा सुन्दर होती है। मुस्कान से खिला औरतों का चेहरा मनोरम होता है ।।१।।

रात के अन्धकार रूप दुःख से दुःखी सुबह को पूरब दिशा का मुख लाल भी मनोरम होता है ।।२।।

अलंकृत अंगों वाली युवती, जो प्रथम मिलन के समय प्रियतम के पास जाती होती है, उसके पैर का आलता मनोरम होता है ।।३।।

बंगाल के लोगों को स्वादिष्ट व्यञ्जन तथा मछली के साथ चावल (भात) प्रिय भोजन में मनोनुकूल होता है।।४।।

माँ का दूध पीते हुए बच्चे का चेहरा मुस्कुराता हुआ माँ के हृदय से सटा हुआ मनोहर होता है ।।५।।

प्रमदाजन के चञ्चल चितवन में भी योगी का निर्मल मन अनासक्त (अविचलित) सुन्दर (अच्छा) माना जाता है।।६।।

सुन्दर अर्थयुक्त वक्रोक्ति से सुघटित निर्दुष्ट मनोरम कवि रचना में जो पदावली समर्थ होती है, वह मनोरम है ।।७।।

पूर्णिमा को (ग्रहण के समय) ग्रसित उदास चन्द्र मण्डल जब राहु के द्वारा मुक्त कर दिया जाता है, वह मनोहर लगता है।।८।।

oooo

(८)

विकसति पल्वलजले सरोजम् ।
न हि जलनिधिकलकले सरोजम् ।।१।।
विलसतु वापीवारिणि किन्तु न ।
सरिदुदके चञ्चले सरोजम् ।।२।।
प्रवहतु सुरसरिदम्बरफलके ।
पंङ्किलशैवलतले सरोजम् ।।३।।
जनगणगर्हिततोयतडागे ।
कल्मषतृणसङ्कुले सरोजम् ।।४।।

कविकुलकल्पनया जलरहिते ।

युवतीमुखमण्डले सरोजम् ।।५।।

हरिनेत्रं साहस्रकमलवलि-

सङ्कल्पे समतुले सरोजम् ।।६।।

पादनयनकरमुखोपमाने ।

विदितमस्ति कविकुले सरोजम् ।।७।।

राजनीतिदलभेदविधायि च ।

चिह्नं सुविदितदले सरोजम् ।।८।।

कारण्डवमरालकुलकूजित-

जले लसति मञ्जुले सरोजम् ।।९।।

षट्पदसेवितकोशतयाऽसकृ-

दल्पकम्पमिह जले सरोजम् ।।१०।।

भावार्थ - गड्ढे के पानी में कमल खिलता है, किन्तु समुद्र के कलकल तरङ्ग में कमल नहीं खिलता ।।१।।

तालाब के पानी में भले ही कमल खिल जाए, किन्तु चञ्चल नदी के पानी में कमल नहीं खिलता ।।२।।

आकाश गंगा आकाश के सतह पर भले ही बहे, किन्तु पाँक और सेमार (शैवाल) से युक्त सतह पर ही कमल खिलता है।।३।।

लोगों के द्वारा घृणित पानी वाले तालाब में, जहाँ गन्दगी घास फूस जमा होता है वहाँ कमल खिलता है।।४।।

कवियों की कल्पना से जलरहित युवती के मुखमण्डल में कमल खिलता है ।।५।।

(शिव को चढ़ाने के लिए) हज़ार कमल चढ़ाने के संकल्प में (एक कम होने पर) बराबर करने के लिए विष्णु की आँख कमल बन जाता है ।।६।।

कवि वर्ग में पैर, आँख, हाथ तथा मुख की उपमा करने में कमल-प्रसिद्ध है ।।७।।

राजनीतिक दलों में अन्तर करने वाला चिह्न सुप्रसिद्ध दल में कमल है ।।८।।

बत्तख तथा हंसों से गुञ्जायमान सुन्दर जल में कमल शोभता है ।।६।।

गर्भ देश में भौंरे के होने से बार-बार धीरे-धीरे डोलता कमल यहाँ जल में शोभ रहा है ।।१०।।

ooooo

(६)

विलसति पल्वलजले सरोजम् ।
मुखमिव मलिनाञ्चले सरोजम् ।।१।।
विलसतु मानसमध्यगतं तत्र ।
जनसुखदं पल्वले सरोजम् ।।२।।
अलिकुमपगतमतः प्रमत्तम् ।
इति विहसति निजदले सरोजम् ।।३।।
प्रकटयतीव निजं सर्वस्वम् ।
रविकिरणे निर्मले सरोजम् ।।४।।
लसति न केवलमालिकरे ह्यपि ।
समरविजयिपदतले सरोजम् ।।५।।
विकसितमतिरमणीयमथापि च ।
रुचिकरमिह कुड्मले सरोजम् ।।६।।
निजपरिमलमपि मुञ्चति जगते ।
नवपवने चञ्चले सरोजम् ।।७।।

भावार्थ - गड्ढे के पानी में कमल शोभ रहा है। जैसे गन्दे आँचल में मुखकमल शोभता है ।।१।।

कमल मानसरोवर के मध्य स्थित भले शोभित होवें, किन्तु सर्वजन सुखदायक गड्ढे के पानी में ही कमल होता है ।।२।।

उस (कमल) के समीप पहुँचकर भ्रमर-समूह नशे में झूम जाता, इसलिए (ऐसा देखकर) कमल अपनी पंखुरियों पर हँस रहा है ।।३।।

निर्मल सूर्यकिरण में मानो कम्ल अपना सर्वस्व प्रकट कर देता है ।।४।।

यह कमल केवल सखियों के हाथ में ही नहीं शोभता, अपितु युद्ध में

विजयी सेनानियों के पैर के नीचे भी शोभता है।।५।।

खिला हुआ कमल तो अतिशय मनोरम होता ही है, किन्तु कली की अवस्था में भी वह कमल रुचिकर होता है ।।६।।

अपना पराग भी संसार के लिए चञ्चल नव पवन में छोड़ता है (अर्पित कर देता है) ।।७।।

ooooo

(१०)

गायति खगकुलमभिनवगीतम् ।
शाश्वतमनुपदमतिनवगीतम् ।।१।।
भूवियदनलपवनजलवितरण-
हतितितिविषयं मानवगीतम् ।।२।।
कामदहनसन्तापजरतिकृत-
विरहविलापसमुद्भवगीतम् ।।३।।
व्याधकृतैकवधद्वन्द्वापर-
खगवियोगदुःखोद्भवगीतम् ।।४।।
बहुधनवाहनहेतुनवोढ-
वधूदहनशतदुःश्रवगीतम् ।।५।।
प्रमदाहरणसाधुदलनप्रभु-
बहुरावणनरदानवगीतम् ।।६।।
धर्मसमरविमुखार्जुनबोधि न ।
गीतामृतमिव माधवगीतम् ।।७।।
श्रमिकबुभुक्षितमुग्धशिशूनाम्
सहपाकध्वनिनोत्सवगीतम् ।।८।।
हर्म्यजलाशयकमलराजिरत-
समदहंसकारण्डवगीतम् ।।९।।
प्रमदानामवधानविधायि च ।
मुदा बहूनामासवगीतम् ।।१०।।

सहसाऽऽरब्धमदोद्धतमशिवम् ।

शृणु शृणु नवशिवताण्डवगीतम् ।।११।।

भावार्थ - पक्षी का समूह अभिनव गीत गा रहा है। सनातन के साथ-साथ अत्यन्त नूतन गीत गा रहा है ।।१।।

जमीन, आकाश, अग्नि (विद्युत) हवा तथा जल के बँटवारे में अनेक हत्याओं से भरा (आधुनिक) मानव का गीत खग-कुल गा रहा है ।।२।।

कामदेव के जल जाने पर दुःख से पैदा हुआ रति (काम पत्नी) के द्वारा किया गया विरह-विलाप से उत्पन्न गीत भी खग-कुल गा रहा है ।।३।।

व्याधा (निषाद) के द्वारा जोड़े में से एक की हत्या कर दिए जाने पर दूसरे क्रौञ्च पक्षी के वियोगदुःख से उत्पन्न गीत (खग कुल) गा रहा है ।।४।।

(तिलक दहेज में) प्रचुर धन, गाड़ी के लिए नव-विवाहिता की हत्या की सैकड़ों घटनाओं से भरा कष्ट से सुनने लायक गीत (खग-कुल) गा रहा है ।।५।।

औरतों का हरण एवं सज्जनों को पीड़ित करने में समर्थ अनेक रावण सरीखे नरराक्षसों का गीत (खगकुल) गा रहा है।।६।।

धर्मयुद्ध से विमुख अर्जुन को समझाने वाला कृष्ण के द्वारा गाया गया गीतामृत का गीत (आजकल) नहीं गा रहा है।।७।।

मज़दूरों के भूखे, भोले-भाले बच्चों का खाना पकने की आवाज़ के साथ त्योहार का गीत भी (खग-कुल) गा रहा है।।८।।

महलों के भीतर तालाब में कमल पंक्ति के बीच मग्न मदमस्त हंस तथा बत्तख का गीत (खगकुल) गा रहा है।।९।।

युवतियों का ध्यान आकर्षित करने वाला उमंग से मदिर स्वरयुक्त गीत गा रहा है ।।१०।।

एकाएक (चौक चौराहों पर) उठा हुआ मदमत्त अशुभ नये शिव ताण्डव का गीत (खगकुल) गा रहा है, इसे सुनो, सुनो।।११।।

ooooo

(११)

प्रभाते प्राचीमुखं पुनरेव रक्तम् ।
खण्डितावदनं क्रुधा सहसेव रक्तम् ।।१।।
रविं रमणमुपेत्य रममाणा सखीयम् ।
पदं कुरुते नवोढा प्रमदेव रक्तम् ।।२।।
वसन्तागमने सदेयं शाखिशाखा ।
विधत्ते पत्रं मुदाऽसकृदेवरक्तम् ।।३।।
सरोजान्तःकोटरे लीनाब्जलक्ष्मीः ।
कमलविपिनं विधत्ते सकृदेव रक्तम् ।।४।।
प्रभातारुणवैभवं सङ्गृह्य सद्यो ।
जपापुष्पवनं विभाति तथेव रक्तम् ।।५।।
स्वीयमनुरागं दिशन्ती सखी प्राची ।
शुभं परिधत्तेऽम्बरं स्वयमेव रक्तम् ।।६।।
प्रियप्रीतिं भजन्ती प्राची प्रसन्ना ।
प्रकामं कुरुते शिरः सधवेव रक्तम् ।।७।।

भावार्थ - सुबह को पूरब दिशा का मुख पुनः लाल हो गया। जैसे खण्डिता नायिका (जिसका पति अन्यत्र कहीं रमण कर रात के अन्तिम पहर में अपनी प्रियतमा के पास आता है, वह प्रियतमा खण्डिता नायिका कहलाती है) का चेहरा क्रोध से एकाएक लाल हो गया हो ।।१।।

प्रियतम सूर्य को पाकर रमण करती हुई यह सखी (पूरब दिशा) नवविवाहिता नायिका की तरह अपना पैर रंग रही हो।।२।।

हमेशा वृक्ष की शाखा वसन्त ऋतु के आने पर खुशी से अपने पत्ते को बार-बार लाल कर लेती है ।।३।।

कमल के गर्भ देश के कोटर में लीन कमल की शोभा-सम्पत्ति कमलवन को एकबार ही लाल कर देती है।।४।।

सीधे सुबह की लालिमा रूप सम्पत्ति का संग्रह कर ओढुल फूल का वन उसी तरह लाल प्रतीत होता है ।।५।।

पूरब दिशा रूप सखी अपना प्रेम सूचित करती हुई स्वयं शुभ लाल वस्त्र

धारण करती है ।।६।।

प्रियतम का प्रेम पाकर प्रसन्न पूरब दिशा सधवा की भाँति अपने मस्तक (माङ्) को अतिशय लाल कर रही है।।७।।

ooooo

(१२)

विद्रुमाभो द्रुमोऽयं भवति प्रभाते ।
स्वकीयं वृत्तं नवं वदति प्रभाते ।।१।।
निशाकाले निर्जने हित्वा विषम् ।
असौ नवसञ्जीवनं सृजति प्रभाते ।।२।।
खगेभ्यः प्रददात्ययं नीडाश्रयम् ।
तद्वचोभी रविं प्रार्थयति प्रभाते ।।३।।
भानुनाऽऽकृष्याब्जगर्भान्तःश्रियम् ।
वितीर्णां निजशिखाग्रे धरति प्रभाते ।।४।।
वायुना धुतपल्लवैरिव पाणिभिः ।
प्राणिने गतिशीलतां दिशति प्रभाते ।।५।।
सम्प्रपतितान् तुषाराणां शीकरान् ।
असौ निजजीवातवे पिबति प्रभाते ।।६।।
भानवीया भानवोऽह्नि तुदन्ति ये ।
सोढुमेतान् तत्परो भवति प्रभाते ।।७।।

भावार्थ - मूंगे की शोभावाला (लाल) यह वृक्ष सुबह को हो जाता है। अपनी नवीन घटना सुबह यह बोल रहा है।।१।।

रात को निर्जन में अपना विष (कार्बन) छोड़कर यह सुबह को नवजीवन (ऑक्सीजन) पैदा करता है ।।२।।

घोषले का आधार चिड़ियों को यह प्रदान करता है। उन्हीं (चिड़ियों) की आवाज़ से सुबह को सूरज की प्रार्थना करता है।।३।।

सुबह को सूरज के द्वारा कमल के गर्भ से खींचकर बाँटी गई शोभा सम्पत्ति को अपनी शिखा के ऊपर यह वृक्ष धारण करता है।।४।।

सुबह को हवा के द्वारा कम्पित पल्लव रूप हाथों से प्राणी को गतिशीलता की शिक्षा यह वृक्ष देता है ।।५।।

गिरे हुए ओस के कणों को सुबह यह वृक्ष अपने जीने के लिए पीता है ।।६।।

सूरज की किरणें दिन में जो इसे पीड़ित करती हैं, उन्हें सहने के लिए यह वृक्ष सुबह को तैयार हो रही है।।७।।

ooooo

(१३)

आवृणोति नभस्तलं कादम्बिनी ।
नो जलं प्रददात्यलं कादम्बिनी ।।१।।
शस्यदं केदारखण्डं शुष्यति ।
व्यधाद्दीर्णमुरःस्थलं कादम्बिनी ।।२।।
पादचारेणाद्य गमनं दुष्करम् ।
नेक्षते नगरे मलं कादम्बिनी ।।३।।
आतपं हरते नृणामिति विश्रुतम् ।
तापमद्य करोत्यलं कादम्बिनी ।।४।।
मानिनीनां मानभङ्गे तत्परा ।
सङ्गमे प्रियसंवलं कादम्बिनी ।।५।।
विद्युतं स्तनितं च धत्ते त्रासदम् ।
वारिदाने नो बलं कादम्बिनी ।।६।।
कूपवापीपल्वलानां का कथा ।
व्यधात्स्रोतो निर्जलं कादम्बिनी ।।७।।
विप्रलब्धायाः सखी प्रियकारिणी ।
व्यधात्पथिकं चञ्चलं कादम्बिनी ।।८।।

भावार्थ – आकाश तल को मेघमाला ढक लेती है। यह मेघमाला पर्याप्त जल (वर्षा) नहीं देती ।।१।।

फ़सल देने वाला खेत सूख रहा है, उसका हृदयस्थल (सतह) को विदीर्ण कर दिया है मेघमाला ने। अर्थात् मेघ नहीं बरसने से खेत में दरार पड़ गयी है ।।२।।

आजकल पैदल चलना कठिन हो गया है। शहर में गन्दगी को मेघमाला नहीं देख पाती। मेघ के बरसने से शहर की गन्दगी बहुत कुछ धुल जाती है। मेघमाला रहने पर वर्षा के अभाव में शहर में गन्दगी बढ़ गई है ।।३।।

मेघमाला मनुष्यों का आतप (सन्ताप या गर्मी) दूर करती है, यह विदित है, आज यह मेघमाला पर्याप्त गर्मी पैदा कर रही है।।४।।

मानवती नायिकाओं के मान भंग करने में यह मेघमाला तत्पर रहती है। संगम काल में (उद्दीपन होने से) प्रिय-प्रिया का सहायक होती है ।।५।।

भयानक बिजली और गर्जन को तो यह मेघमाला धारण करती है। किन्तु जल देने (वर्षा करने) में बल धारण नहीं कर पाती। अर्थात् वर्षा करने की सामर्थ्य इस मेघमाला में नहीं है।।६।।

कुआँ, तालाब और गड्ढे की क्या बात, स्रोत (प्रवाह या जलागम) को भी मेघमाला ने निर्जल कर दिया। नहीं बरसने से स्रोत भी सूख गया है ।।७।।

वियोगिनी नायिका की यह उपकार करने वाली सखी है (क्योंकि) परदेशी पति को (वियोगिनी प्रियतमा से मिलने के लिए) मेघमाला ने चञ्चल कर दिया ।।८।।

ooooo

(१४)

श्यामघनसङ्कुलव्योमनि या बलाका ।
यामुनाम्बुनि कुन्दसुभगा सा बलाका ।।१।।
नीलगिरिवरशिखरपरिसरसङ्गृहीत-
द्विरददशनच्छेदतुलिता सा बलाका ।।२।।
रजनितिमिरावृतप्राचीमुखसमुदिता ।
बहुलदलषष्ठीसुधांशुकला बलाका ।।३।।

व्योमवर्त्तिकलिन्दतनयाजलनिमग्न-
दृश्यसुरगजदशनकोटिसमा बलाका ।।४।।
देवमुनिगन्धर्वहितकल्पितविशाले ।
कम्बलेऽर्पितशङ्खविशदा सा बलाका ।।५।।
सर्गरक्षार्थं प्रपीतविषस्य शम्भोः ।
कण्ठविरचितभस्मधवला सा बलाका ।।६।।
मण्डनप्रियदेववनिताकेशपाश-
ग्रथितसितसुमनःसमाना सा बलाका ।।७।।
धर्मविधुरितसकलकलिकालप्रभूत-
कल्मषेऽनतिसत्त्वसुभगा सा बलाका ।।८।।
कज्जलाचलविततपरिसरसम्प्रकटित-
त्र्यम्बकाचलतुहिनशकलाभा बलाका ।।९।।
मेदिनीमीक्षितुं सुरयुवतीकृतासित-
यवनिकावातायनाभा सा बलाका ।।१०।।
विश्वजनकल्याणकामसुरप्रकल्पित-
यज्ञधूमप्रकटफलरूपा बलाका ।।११।।
लुण्ठनच्छलनाहतिप्रचितान्धकारे ।
क्षीयमाणाकृतिसुजनताभा बलाका ।।१२।।
सर्वतो राशीकृताखिलजगद्वर्ति-
नीलमणिसङ्घातमौक्तिसमा बलाका ।।१३।।
साम्प्रतं प्रतिभावतां बहुवैभवानाम् ।
कृष्णघनधनशुद्धमुद्राभा बलाका ।।१४।।
क्षुधितसंसृतिशिशुप्रेरितविश्वमातुः ।
स्तनाग्रस्रुतदुग्धविन्दुसमा बलाका ।।१५।।
पूर्णपरमात्मनि घनश्यामे लयार्थम् ।
प्रोद्गतात्मतदंशतुल्या सा बलाका ।।१६।।

भावार्थ - काले मेघ से घिरे आसमान में जो बगुले की कतार है, वह बगुले की कतार यमुना के जल में कुन्दपुष्प की भाँति लग रही है।।१।।

वह बगुले की कतार नीले पर्वत के शिखर पर इकट्ठा किए गए हाथी के दाँत के टुकड़े की भाँति लग रहा है ।।२।।

वह बलाका रात के अन्धकार से ढकी पूरब दिशा के मुख पर कृष्ण पक्ष की षष्ठी तिथि के चन्द्रमा की कला की भाँति लग रहा है।।३।।

आकाश में विद्यमान यमुना के जल में डुबे हुए दिखाई पड़ते हुए ऐरावत के दाँत के अग्रभाग की तरह बलाका है ।।४।।

देवता, मुनि, गन्धर्व के लिए रखे गए विशाल कम्बल पर सजाए शंख की भाँति स्वच्छ वह बगुले की कतार लग रहा है।।५।।

संसार की रक्षा के लिए विषपान करने वाले शिव के कण्ठ में सुशोभित भस्म की भाँति स्वच्छ वह बलाका है।।६।।

शृंगार प्रिय अप्सरा के जूड़े में गूँथे स्वच्छ पुष्प के समान वह बलाका है ।।७।।

धर्म से वंचित समस्त कलियुग के अतिशय पाप के बीच थोड़े सत्त्व गुण की तरह सुभग वह बलाका है।।८।।

काले पर्वत के विस्तृत परिसर में प्रकट हुए कैलास के बर्फ के टुकड़े की तरह बलाका है ।।९।।

धरती को देखने के लिए देवांगनाओं द्वारा लगाए गये काले पर्दे के बीच झरोखे की भाँति वह बलाका है ।।१०।।

संसार के जन कल्याण का काम करने के लिए देवताओं द्वारा संकल्पित यज्ञ के धुँआ के बीच प्रकट यज्ञ फल की भाँति बलाका है ।।११।।

लूट, ठगी, हत्या आदि से बढ़े पापान्धकार में क्षीण होती हुई सज्जनता की भाँति वह बलाका है ।।१२।।

सब ओर से संग्रह किए गए संसार में विद्यमान नीलमणि की ढेर में मोती की भाँति बलाका है ।।१३।।

इस समय चतुर वैभवशाली लोगों के काले पर्याप्त धन के बीच स्वच्छ धन की भाँति बलाका है ।।१४।।

पूर्ण परमात्मा घनश्याम में लीन होने के लिए उन्हीं के अंश आत्मा ऊपर उठ चुका है, उसी के समान वह बलाका है।।१६।।

ooooo

(१५)

राजते वनराजिभिर्वसुधा समन्तात् ।
प्रावृषीव पतिप्रिया प्रमदा समन्तात् ।।१।।
वर्त्मभिस्तृणसङ्कुलैश्चलतां जनानाम् ।
गम्यविभ्रमशालिनां क्षणदा समन्तात् ।।२।।
वारिभिः परिपूरितेषु सरःसु मग्ना ।
पद्मिनी रमणीदृगुत्सवदा समन्तात् ।।३।।
वृष्टिजलपिच्छिले वर्त्मनि यान्ति सर्वे ।
गर्भभरमन्दा इव प्रमदाः समन्तात् ।।४।।
पल्वलेषु पतन्ति शिशुसङ्घाः प्रसन्नाः ।
उन्नतस्थलतोऽन्वहं बहुधा समन्तात् ।।५।।

भावार्थ - लता-पादपों से सब ओर वर्षाकाल में धरती सुशोभित है, जैसे प्रियतमा युवती सर्वथा वर्षाकाल में सजी दीखती है । (क्योंकि वर्षाकाल में दूर रहने वाले पति भी प्रियतमा से मिलने आते ही हैं) ।।१।।

घास से भरी राहों से चलने वाले लोग अपने गन्तव्य से भटक जाते हैं, उनके लिए सब तरफ रात (जैसा) दृश्य होता है। अर्थात् जैसे रात के अन्धेरे में लोग रास्ता भूलकर अपने गन्तव्य को नहीं पहुँच पाते उसी तरह वर्षा ऋतु में रास्ते पर घास जम जाने के कारण लोग गन्तव्य से भटक जाते हैं ।।२।।

जलों से भरे तालाबों में डूबे कमल वन सब ओर सुन्दरी नारी की आँख जैसे कमल दिखलाकर मानों कामिनी के नेत्र दर्शन रूप उत्सव प्रदान करता है ।।३।।

सब ओर वर्षा के पानी से फिसलन भरी राह पर सब लोग उसी तरह चलते हैं जैसे गर्भ के अतिशय भार से धीरे धीरे चलती नारी हो ।।४।।

प्रतिदिन सब जगह बहुत से बच्चे के झुण्ड ऊँचे स्थान से पानी भरे गड्ढे में छलांग लगाते हैं ।।५।।

ooooo

(१६)

शब्दगुणमाकाशमखिलं वीक्षते ।
शैलमथ सूचीसमविलं वीक्षते ।।१।।
कामिनामिह दृष्टिरतिसूक्ष्मा सखे ।
प्रमुग्धालिकपोलसुतिलं वीक्षते ।।२।।
व्रजन्तीनां रमणवसतिं योषिताम् ।
वयस्या ह्यनुकूलमनिलं वीक्षते ।।३।।
प्रावृषि प्रियमभिसरन्ती पथि निशि ।
विद्युता स्थलमथो सलिलं वीक्षते ।।४।।
स्तेनकुलतीक्ष्णातिविस्मयकारिदृक् ।
अमाया ध्वान्तेऽपि निखिलं वीक्षते ।।५।।
धीवरो जलधिं विशन्नागामिनम् ।
हितं वा प्रतिकूलमनिलं वीक्षते ।।६।।
योगिनांकुलमात्मबुद्धिबलेन वै ।
दुर्विपाकं मोहकलिलं वीक्षते ।।७।।
दुःखजलधौ मज्जमानो द्वैतभाक् ।
धिया कैवल्याय कपिलं वीक्षते ।।८।।

भावार्थ - आकाश का गुण शब्द है, वह आकाश सब कुछ देखता है। वह पर्वत तथा सूई के समान छिद्र को भी देखता है। अर्थात् आकाश सब यह होता है।।१।।

हे मित्र ! कामी जनों की दृष्टि अत्यन्त सूक्ष्म होती है, जो प्रमुग्धा नायिका के कपोल में सुन्दर तिल को देख लेती है।।२।।

प्रियतम स्थान को जाती हुई नायिकाओं की सखी अनुकूल हवा देख लेती है ।।३।।

वर्षा ऋतु में प्रेमी के पास अभिसार को जाती हुई नायिका रात में बिजली की चमक से स्थल तथा जल देख लेती है ।।४।।

चोरों की बहुत तेज तथा अतिशय आश्चर्यकारी दृष्टि अमावस्या के अन्धकार में भी सब कुछ देख लेती है ।।५।।

मल्लाह समुद्र में प्रवेश करते समय आने वाले अनुकूल अथवा प्रतिकूल पवन भाँप लेता है ।।६।।

योगियों का समूह अपने बुद्धि-बल से मोह के दलदल का खराब परिणाम निश्चय देख लेता है ।।७।।

दुःख के सागर में डूबता हुआ द्वैतवादी (सांख्य मतावलम्बी) कैवल्य (मोक्ष) के लिए कपिल को देखता है। अर्थात् कपिल मुनि के सांख्य दर्शन के अनुसार अपना मत स्थिरकरते हैं ।।८।।

oooo

(१७)

कामिनीकमनीयकायं पश्यति ।
दैन्यमत्रविसारि नायं पश्यति ।।१।।
वर्धमानं कोशमनिशं श्रीमताम् ।
वीक्ष्य शुभमभितोऽधुनायं पश्यति ।।२।।
शस्यसम्पदमात्मनो भूभागजाम् ।
वप्तृकुलमागाम्युपायं पश्यति ।।३।।
जलौघाहतवेश्मपशुकृष्यादिकः ।
सर्वकारीयं सहायं पश्यति ।।४।।
स्वीयमतिलाभं जनो न हि मन्यते ।
स्वल्पमपि परकीयमायं पश्यति ।।५।।
अन्यदीयमनल्पदोषमलं सखे ।
मक्षिकावृत्तिः सदायं पश्यति ।।६।।
नवोद्वाहा कामिनी कथमन्वहम् ।
भानुमन्तमुपेक्ष्य सायं पश्यति ।।७।।

भावार्थ - प्रमदा नायिका के मनोहर शरीर को तो यह (देश का कर्णधार) देखता है, किन्तु फैलती हुई (बढ़ती हुई) गरीबी यह नहीं देखता।।१।।

धनवानों के दिनानुदिन बढ़ते खज़ाने को देखकर, आजकल चारों ओर खुशहाली को ही यह देख पाता है।।२।।

अपने खेतों में पैदा होने वाली फसल को ही बोने वालों का समूह (कृषक वर्ग) आने वाले समय में जीवनोपाय देखता है।।३।।

बाढ़ में नष्ट हुए घर, पशु खेती आदि वाला कृषक वर्ग सरकारी सहायता की ओर देखता है ।।४।।

अपना बहुत बड़ा लाभ भी लोग नहीं मानता, लेकिन थोड़ी भी दूसरे की आय देखने लगता है ।।५।।

हे मित्र ! दूसरे को अतिशय दोषरूप मल को मक्खी का व्यवहार वाला यह हमेशा देखता है ।।६।।

नवविवाहिता प्रमदा प्रतिदिन क्यों सूर्य के प्रकाश का तिरस्कार कर शाम की प्रतीक्षा करती ? ।।७।।

ooooo

(१८)

दूरमथ गन्तव्यमधुना ।
नोचितं स्थातव्यमधुना ।।१।।
नैशतमसावृतमरण्यम् ।
नो किमपि द्रष्टव्यमधुना ।।२।।
वञ्चका अथ हिंसका अपि ।
जीवनं त्रातव्यमधुना ।।३।।
वर्त्म विस्मयकारि बुद्ध्या ।
पदं विनिधातव्यमधुना ।।४।।
उलूको हुं हुं विधत्ते ।
श्रोत्रमपिधातव्यमधुना ।।५।।
शिवा रुतमशिवं प्रकुरुते ।
नापरं श्रोतव्यमधुना ।।६।।
श्वापदव्याप्तं वनं किल ।

किमग्रे सर्त्तव्यमधुना ।।७।।

करं धेहि मदीयमबले ।

गाढमाश्लिष्टव्यमधुना ।।८।।

भावार्थ - अब और भी दूर जाना है। इस समय रुकना अच्छा नहीं है।।१।।

रात के अन्धकार से वन ढका हुआ है, इस समय कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता ।।२।।

ठग भी हैं, हिंसक भी हैं, इस समय (इनसे) बचना है।।३।।

चत्कारपूर्ण रास्ता है, इस समय जानबूझ कर कदम रखना है।।४।।

उल्लू "हूँ हूँ" आवाज़ कर रहा है। इस समय कान बंद करना चाहिए ।।५।।

सियार अशुभ (खराब) आवाज़ कर रहा है, इस समय कुछ भी सुनाई नहीं देता ।।६।।

हिंसक जंगली जानवरों से भरा हुआ यह वन है, क्या इस समय आगे बढ़ना चाहिए ? ।।७।।

हे प्रिये ! मेरा हाथ पकड़ लो । इस समय गाढ़ आलिङ्गन करो ।।८।।

ooooo

(१६)

दूरभाषेणास्मदीयं जीवनम् ।

कुटुम्बं वेत्त्यन्यदीयं जीवनम् ।।१।।

नो मनो रमते प्रियालापे क्वचित् ।

पुस्तकेन च चिन्तनीयं जीवनम् ।।२।।

वेश्म निर्जनमाकुलं कुरुते मुहुः ।

येन केन च जीवनीयं जीवनम् ।।३।।

चिन्तनं न हि युज्यते सततं बहु ।

कर्म विरतमकल्पनीयं जीवनम् ।।४।।

जराव्याधिविमर्दितं सुखलोलुपम् ।

स्तम्भितं वत निन्दनीयं जीवनम् ।।५।।

सन्ततीनां चिन्तयाऽतिव्याकुलम् ।

ताभिरेवोपेक्षणीयं जीवनम् ।।६।।

अर्पितं येभ्यस्तदर्थं भारकृत् ।
धिक् तदेवं मानवीयं जीवनम् ।।७।।

भावार्थ – दूरभाष (फोन, मोबाईल) से ही हमारा जीवन है, परिवार हमारा जीवन दूसरा ही समझ बैठा है ।।१।।

अपनी प्रिया (पत्नी) के साथ बातचीत में कभी मन नहीं लगता। पुस्तक के माध्यम से कुछ चिन्तन में जीवन बीतता है।।२।।

आदमी के बिना घर बारबार व्याकुल कर देता है, जिस किसी तरह यह जीवन जीया जा रहा है ।।३।।

हमेशा बहुत चिन्तन करना सम्भव नहीं होता। काम के बिना यह जीवन अकल्पनीय है ।।४।।

बुढ़ापा, बीमारी से परेशान सुख के लिए लालायित निन्दनीय यह जीवन रुक सा गया है ।।५।।

सन्तानों की चिन्ता से यह जीवन अत्यन्त व्याकुल रहता है, किन्तु उन्हीं सन्तानों के द्वारा यह जीवन उपेक्षा के लायक बन गया है ।।६।।

जिनके लिए यह जीवन अर्पित हुआ, उन्हीं के ऊपर यह बोझ बन गया है। उस तरह के मानव जीवन को धिक्कार है।।७।।

ooooo

(२०)

दधाति मोदमव्ययं कदा मदीयमानसम् ।
धनागमेऽपि लोलुपं सदा मदीयमानसम् ।।१।।
प्रयाति दूरमन्तिकं च समायाति तत्क्षणम् ।
जवीय एव भाति सर्वदा मदीयमानसम् ।।२।।
अपेक्षते न यानमाशुगामि तत्र किञ्चन ।
भवेदमातमोऽपि वा यदा मदीयमानसम् ।।३।।
तदद्य सागरान्ततीरदेशमेत्य मोदते ।
प्रयाति शैलशृङ्गमन्यदा मदीयमानसम् ।।४।।
वियन्निशीथनाथविम्बमाददाति सस्पृहम् ।

बिभेति मृत्युतो यदा कदा मदीयमानसम् ।।५।।
लभेत वैभवं समुन्नतिं च कोऽपि मानवः ।
प्रतीक्ष्य तत्समत्सरं तदा मदीयमानसम् ।।६।।
निसङ्गयोगमभ्यसन् समर्चयन्नपि प्रभुम् ।
भवाम्यथोऽपि चञ्चलं तदा मदीयमानसम् ।।७।।
क्वचिद्बलेन यौवनेन बुद्धिवैभवेन वा ।
मदान्धतामुपैति सम्पदा मदीयमानसम् ।।८।।

भावार्थ - मेरा मन कब नित्य खुशी को धारण करता है? धन लाभ में भी लालची मेरा मन होता है ।।१।।

यह दूर भागता उसी समय समीप जाता है, मेरा मन हमेशा अतिशय चञ्चल ही मालूम पड़ता है।।२।।

जब अमावस का अन्धकार भी हो तब भी यह मेरा मन शीघ्रगामी किसी सवारी की अपेक्षा नहीं करता ।।३।।

वह आज सागर के अन्त के देश में जाकर प्रसन्न होता है और दूसरे क्षण पर्वत के शिखर पर मेरा मन चला जाता है।।४।।

यह मेरा मन आकाश में चन्द्रमण्डल को स्पृहा के साथ पकड़ लेता है, और यदा कदा मृत्यु से भी डरता है।।५।।

कोई आदमी सम्पत्ति प्राप्त करता है और उन्नति को पाता है तो उसे देखकर उस समय मेरा मन ईर्ष्या से युक्त हो जाता है।।६।।

संगरहित या निर्विकल्पक योग का अभ्यास करता अथवा प्रभु की आराधना करता हुआ भी मैं होता हूँ, फिर भी मेरा मन उस समय चञ्चल रहता है ।।७।।

कहीं बल से, कहीं युवावस्था से कहीं बुद्धि की सम्पत्ति से अथवा कहीं धन से मेरा मन मदान्धता को प्राप्त कर लेता है।।८।।

ooooo

(२१)

दिगन्तदेश वर्त्तिनी द्युतिर्विभाति मे ।
शनैः शनै र्विसारिणीं रतिं ददाति मे ।।१।।
चिरादिदं प्रतीक्षमाणमानसं सखे ।

अमन्दमोदमद्य सद्य आदधाति मे ॥२॥
जरादिवाधितं वपू रुजादिपीडितम् ।
हठादिदं निशम्य वैक्लवं जहाति मे ॥३॥
निमज्जते च दुःखवारिधौ क्षणेन यत् ।
तदेव चाऽऽनिशम्य मङ्गलं चकास्ति मे ॥४॥
कुटुम्बभारकृद् भयावहं निरर्थकम् ।
अमोघमद्य जीवनं स्वतो विभाति मे ॥५॥

भावार्थ – मुझे दिशा के अन्त देश में रहने वाली रोशनी प्रतीत हो रही है, जो धीरे-धीरे फैलनेवाली प्रीति (प्रसन्नता) मुझे दे रही है ॥१॥

हे मित्र ! बहुत दिन से मेरा यह प्रतीक्षा करता हुआ मन आज अतिशय खुशी को सीधे पा लेता है ॥२॥

बुढ़ापे से परेशान और रोग से पीड़ित यह मेरा शरीर अचानक विकलता को छोड़ रही है ॥३॥

दुःख के सागर में जो कुछ क्षण पूर्व डूब रहा था वही मन शुभ सुनकर चमक उठता है ॥४॥

जो मेरा जीवन परिवार के लिए बोझ, भयावह, निरर्थक था, वही स्वतः अब सार्थक या सफल प्रतीत हो रहा है ॥५॥

ooooo

(२२)

प्रसूनं सहकण्टकं जनजीवनम् ।
रहस्यं सहनाटकं जनजीवनम् ॥१॥
महार्हं शोभाकरं सदभीष्टदम् ।
सुरत्नं सहहाटकं जनजीवनम् ॥२॥
विशालं सौविध्यसंयुक्तं शुभम् ।
सुहर्म्यं सहभाटकं जनजीवनम् ॥३॥
ज्ञानविज्ञानान्वितं गरिमास्पदम् ।

बहुरहस्योद्घाटकं जनजीवनम् ।।४।।
दुःखदं सुखसंयुतं करुणामयम् ।
सुवृत्तानां टङ्ककं जनजीवनम् ।।५।।

भावार्थ - मानव जीवन काँटों से भरा फूल है, यह मानव जीवन नाटक से मिश्रित रहस्य है ।।१।।

जनजीवन बड़ा कीमती, शोभाधायक, सुन्दर मनोवांछित प्रदान करने वाला, मूल्य के साथ सुन्दर रत्न है ।।२।।

विशाल, सुविधा से भरा, सुन्दर मंगलदायक जनजीवन सुन्दर महल है जहाँ (साँस का) भाड़ा देना पड़ता है ।।३।।

ज्ञान-विज्ञान से युक्त गरिमापूर्ण बहुत से रहस्यों का उद्घाटन करने वाला यह जनजीवन है ।।४।।

दुःखदायक, सुख से युक्त, करुणापूर्ण तथा बहुत सारी घटनाओं को टंकित करने वाला यह मानव जीवन है ।।५।।

ooooo

(२३)

रतिरताया अधरदलपानं मनोज्ञम् ।
कुसुममभितो भ्रमरकलगानं मनोज्ञम् ।।१।।
कुसुमशरविद्धप्रियाया मदनसदनम् ।
सुरुचि वदनं विगलदभिमानं मनोज्ञम् ।।२।।
प्रमदवनलीलारतं बहुधालिवृन्दम् ।
निजनिजप्रियकृतसमाधानं मनोज्ञम् ।।३।।
शिशिरशैत्यसमाकुलं बहुकामियुगलम् ।
हृतवसनमपि गतव्यवधानं मनोज्ञम् ।।४।।
प्रकृतिपीडितजनसहायं वहति यदिदम् ।
गगनचरमपि तत्पवनयानं मनोज्ञम् ।।५।।

सदयभावनया सुनामीपीड़ितेभ्यः ।
मखशतादतिफलं धनदानं मनोज्ञम् ।।६।।
घनतिमिरवनदिग्भ्रमितजनसंविदर्थम् ।
क्षितिजसंश्रितरविकिरणभानं मनोज्ञम् ।।७।।

भावार्थ - कामक्रीड़ा में तल्लीन नायिका के अधरदल का पान अत्यन्त मनोरम होता । फूल के चारों तरफ भौंरे का मधुरगुञ्जन मनोहर होता है ।।१।।

कामदेव के बाण से विद्ध प्रियतमा का काम का आश्रय रुचिकर, चेहरा अभिमान या अहंकार से रहित होने पर मनोहर होता है ।।२।।

प्रमदवन में (पार्क आदि में) क्रीड़ा में रमी हुई अनेक प्रकार की सखियों का समूह अपने-अपने प्रेमी से संलग्न हो मनोरम प्रतीत होता है ।।३।।

शिशिर ऋतु की ठंढी से व्याकुल अनेक कामुकों का जोड़ा वस्त्ररहित होता हुआ भी अबाधित रहकर मनोहर प्रतीत होता है।।४।।

जो यह पवन यान (वायुयान) प्राकृतिक आपदों से पीड़ित लोगों के लिए सहायता सामग्री ढोता है, अतः आकाश में होता हुआ भी वह मनोहर होता है ।।५।।

दयायुक्त भावना से सुनामी पीड़ित लोगों के लिए धन-दान सैकड़ों यज्ञों से अधिक फल देने वाला अच्छा है।।६।।

घने अन्धकारयुक्त वन में दिग्भ्रमित लोगों के सही दिशाज्ञान कराने के लिए (पूर्व) क्षितिज में स्थित सूर्य की किरणों की प्रतीति अच्छी है ।।७।।

ooooo

(२४)

मृगमदमुग्धमिदं मृगयूथम् ।
अटति अरण्यमिदं मृगयूथम् ।।१।।
तृणमपि सुलभमितो न ततः किम् ।
चरति सगन्धमिदं मृगयूथम् ।।२।।
आतनुतां खलदलमतिजालम्।
विशति मुहुस्तदिदं मृगयूथम् ।।३।।

लुब्धकभयमुत वन्यभयं किल ।
भवति न भिन्नमिदं मृगयूथम्।।४।।
शावकहरणमथ स्वहरणमिह ।
तदपि न खिन्नमिदं मृगयूथम् ।।५।।
श्रुतिसुखदं छलनापररवमपि ।
वेत्ति सुगीतमिदं मृगयूथम् ।।६।।
वञ्चितमतितरमनेकधाऽलम् ।
तदपि सनन्दमिदं मृगयूथम् ।।७।।
त्यजति न वीक्ष्य जगन्निजचरितम् ।
कथमनवद्यमिदं मृगयूथम् ।।८।।
वितरति नयनश्रियं तथापि न ।
निश्छलभावमिदं मृगयूथम् ।।९।।

भावार्थ - यह मृग का झुण्ड कस्तूरी के मद से मुग्ध है। यह जंगल में भटकता फिरता है ।।१।।

यहाँ वहाँ सुलभ घास भी यह मृग का झुण्ड गर्व के साथ (या गन्धयुक्त होने के कारण) नहीं चर पाता ।।२।।

शत्रु वर्ग (शिकारी का गिरोह) विशाल जाल फैला दे, फिर भी बार-बार उसमें प्रवेश कर जाता है या फंस जाता है ।।३।।

शिकारी का भय तथा जंगली जानवर का भय हो फिर भी यह मृग का झुण्ड अलग-अलग नहीं होता ।।४।।

बच्चे का हरण हो अथवा अपना भी हरण हो, फिर भी यह मृग का झुण्ड दुःखी नहीं होता ।।५।।

कर्णप्रिय ठगी से भरी आवाज को भी मृग का झुण्ड सुन्दर गीत समझ बैठता है ।।६।।

अनेक बार पर्याप्त बहुत ठगा हुआ भी यह मृग का झुण्ड होता है, फिर भी खुश रहता है ।।७।।

यह मृग का झुण्ड संसार को देखकर (भी) अनिन्दनीय अपना चरित्र क्यों नहीं छोड़ता ? ।।८।।

अपनी आँख की शोभा तो बाँटता है फिर भी यह मृग का झुण्ड अपना छलरहित भाव (लोगों में) क्यों नहीं बाँटता है ? ।।६।।

ooooo

(२५)

कचाचिताऽबला कृशा दीना ।
चिनोति किञ्चिदत्र सा दीना ।।१।।
कुटुम्बभारमुद्वहन्तीयम् ।
दुनोति भाविचिन्तया दीना ।।२।।
शुनाऽनुगम्यमानया मन्दम् ।
समं प्रयाति वत्सया दीना ।।३।।
न वस्त्रमङ्गसञ्छदायालम् ।
विजृम्भते बुभुक्षया दीना ।।४।।
भवेदमाऽथ पूर्णिमा वापि ।
तमोवृताऽस्त्यनुत्सवा दीना ।।५।।
विसृष्टकल्मषस्थितोच्छिष्टे ।
वियुध्यते समं शुना दीना ।।६।।
तिरस्कृताऽखिलैरियं सद्यः ।
हसत्यशेषमद्य सा दीना ।।७।।
विभाति भारतं यदित्युक्तम् ।
निशम्य तत्सविस्मया दीना ।।८।।

भावार्थ - केश से व्याप्त दुर्बल दीन दुःखी यह अबला नारी है। वह दीन अबला यहाँ कुछ चुन रही है ।।१।।

यह अपने परिवार का बोझ ढोती हुई भावी चिन्ता से दुःखी हो रही है ।।२।।

कुत्ता उसका पीछा करता है, वह अबला धीरे-धीरे अपनी बच्ची के साथ जा रही है ।।३।।

अपने अंगों को ठीक से ढकने के लिए उसके पास काफी वस्त्र नहीं है। वह अबला भूख से जम्हाई ले रही है ।।४।।

अमावस्या हो या पूर्णिमा हो, वह अबला अन्धकार से भरी उत्सव रहित रहती है ।।५।।

फेंकी गई गन्दगी की ढेर पर स्थित जूठन पर कुत्ते से लड़ती है। अर्थात् उस जूठन को एक तरफ कुत्ता खींचता एक तरफ वह खींचती ।।६।।

यह सबों के द्वारा तिरस्कृत है, आज यह अबला सब पर सीधे उपहास कर रही है ।।८।।

"यह भारत वर्ष चमक रहा है" यह जो कहा गया है, उसे सुनकर यह अबला नारी चकित है ।।९।।

ooooo

(२६)

दीनदृशं दधाति सा बाला ।
शुचमधिकं ददाति सा बाला ।।१।।
कृशकायं शिशुं निधायाऽङ्के ।
पथि मन्दं प्रयाति सा बाला ।।२।।
हिमहतपद्मिनीव तारुण्ये ।
युवतिपदं जहाति सा बाला ।।३।।
गिरितुहिनस्थलीभवा पिङ्गा ।
व्रततिरिवावभाति सा बाला ।।४।।
खलभुक्तोज्झिता समाजस्य ।
क्रूरकृति र्विभाति सा बाला ।।५।।
पथ्युपलस्थले कृशा दीना ।
अटति वृथा पदातिसा बाला ।।६।।

विरसनिसर्गचारुसर्वाङ्गी ।
मम मनसो न याति सा बाला ।।७।।

भावार्थ - वह बाला दीन दृष्टि धारण करती है, वह अतिशय शोक दे रही है। अर्थात् उसे देखकर काफी तकलीफ़ होती है।।१।।

अपनी गोद में दुबले पतले-बच्चे को रखकर रास्ते पर धीरे- धीरे वह बाला जा रही है ।।२।।

वह बाला बर्फ से मारी गई कमलिनी की भाँति युवावस्था में ही युवती का पद छोड़ रही है अर्थात् बूढ़ी दीख रही है ।।३।।

पहाड़ी बर्फीली जमीन पर उगी हुई पीली लता की भाँति वह बाला प्रतीत हो रही है ।।४।।

किसी दुर्जन के द्वारा उपभोग कर परित्यक्त वह बाला समाज की निर्दय कृति प्रतीत हो रही है ।।५।।

पथरीली राह पर दीन दुर्बल वह बाला निष्प्रयोजन पैदल भटक रही है ।।६।।

रसहीन स्वभाव से सुन्दर सब अंगों वाली वह बाला मेरे मन से नहीं जा रही है ।।७।।

ooooo

(२७)

घनघटासङ्कुलव्योमनि दामिनीव ।
चञ्चला द्युतिरेति चेतसि कामिनीव ।।१।।
कूजितेन करोति पिककुलमाकुलं माम् ।
मुधा नोऽवसरं गमय बहुमानिनीव ।।२।।
चिरप्रतीक्षा यत्कृते समुपैति सा माम् ।
कौमुदीमुदिता मनोहरयामिनीव ।।३।।
जलकलशमुदवहन्ती काचिन्नवोढा ।
मन्दमन्दमुपैति पथि गजगामिनीव ।।४।।
समुत्सुकता मदीया भवतादिदानीम् ।
परीक्षा छात्रस्य शुभपरिणामिनीव ।।५।।

भावार्थ – मेघ की घटा से व्याप्त आकाश में बिजली की भाँति, कोई चञ्चल ज्योति मेरे मन में प्रमदा नायिका की भाँति आ रही है ।।१।।

कोयल समूह अपने कूजन से मुझे व्याकुल कर रहा है, अत्यन्त मानवती नायिका की भाँति बेकार में अवसर मत गमाओ।।२।।

जिसके लिए बहुत दिन प्रतीक्षा थी वह मेरे पास उसी तरह आ रही है, जैसे चन्द्रकिरण से प्रसन्न सुन्दर रात हो ।।३।।

पानी के घड़े को ढोती हुई कोई नवविवाहिता युवती रास्ते पर धीरे-धीरे गज गामिनी की तरह समीप से गुजर रही है ।।४।।

इस समय मेरी उत्कण्ठा उसी तरह सफल हो, जैसे कोई परीक्षा सुन्दर परीक्षाफल से सफल मानी जाती है।।५।।

ooooo

(२८)

यदपि गतं न गातुकामोऽहम् ।
शुचि मलिनं विधातुकामोऽहम् ।।१।।
मितमपि ते स्मितं सुधास्यन्दि ।
लभमानो न यातुकामोऽहम् ।।२।।
मदिरदृशाऽवलोकनं सौम्ये ।
वितर बहूनि हातुकामोऽहम् ।।३।।
वचनमिदं तवामृतं मत्वा ।
दिवसनिशं च पातुकामोऽहम् ।।४।।
वदनमिदं कचाकुलं द्रष्टुम् ।
शतमायूंषि दातुकामोऽहम् ।।५।।
करयुगलेन षट्पदाद्भीतो ।
मुकुलयुगं पिधातुकामोऽहम् ।।६।।
अधररसं निपीय सानन्दम् ।
सखि सहसा प्रयातुकामोऽहम् ।।५।।

भावार्थ – जो भी गुजर गया, उसे मैं गाना नहीं चाहता, गन्दे को मैं स्वच्छ करना चाहता हूँ ।।१।।

थोड़ी भी तेरी अमृत टपकाने वाली मुस्कान पाता हुआ मैं जाना नहीं चाहता ।।२।।

हे सुन्दरी ! अपनी मतवाली नज़र से देखती रहो, (इसके लिए) मैं बहुत कुछ छोड़ देना चाहता हूँ ।।३।।

तुम्हारी इस आवाज़ को अमृत मानकर दिन रात पीना चाहता हूँ ।।४।।

केश से उलझे तेरे इस चेहरे को देखने के लिए सैकड़ों उमर देना चाहता हूँ ।।५।।

भौंरे से डरा हुआ मैं अपने दोनों हाथों से दोनों कलियों को ढक लेना चाहता हूँ ।।६।।

हे सखी ! अधर रस का पानकर खुशी के सीधे प्रयाण कर लेना चाहता हूँ ।।७।।

ooooo

(२६)

मदीयचिन्तने त्वमेव त्वम् ।
मदीयजीवने त्वमेव त्वम् ।।१।।
न भाति मद्गृहं त्वया हीनम् ।
न याति च क्षणं त्वमेव त्वम् ।।२।।
न काव्यभावना त्वया हीना ।
मम प्रबन्धने त्वमेव त्वम् ।।३।।
न वा कलाकृतिस्त्वया हीना ।
मदीयकल्पने त्वमेव त्वम् ।।४।।
जगन्ति यान्ति मन्दिरद्वारम् ।
मदीयवन्दने त्वमेव त्वम् ।।५।।
विहाय ते मुखं च काङ्क्षेऽहम् ।
न किञ्चिदीक्षितुं दिवानक्तम् ।।६।।

मदीयदर्शने त्वमेव त्वम् ।
मदीयजीवने त्वमेव त्वम् ।।७।।
जपन्ति नाम केचिदत्यन्तम् ।
नमन्ति पादयोरनासक्तम् ।।८।।
मदीयपूजने त्वमेव त्वम् ।
मदीयजीवने त्वमेव त्वम् ।।९।।
पठन्ति केचिदत्र सन्देशम् ।
वदन्ति वा विचारवैविध्यम् ।।१०।।
मदीयजल्पने तवमेव त्वम् ।
मदीयजीवने त्वमेव त्वम् ।।११।।

भावार्थ - मेरे चिन्तन में तुम ही तुम हो, मेरे जीवन में तुम ही तुम हो ।।१।।

तेरे बिना मेरा घर नहीं शोभता, तथा एक पल भी नहीं बीत पाता, केवल तुम ही सदा रहती हो ।।२।।

तेरे बिना मुझमें काव्य भावना भी नहीं हो पाती, मेरी प्रबन्ध-रचना में केवल तुम ही विद्यमान रहती हो।।३।।

कोई कलाकृति भी तेरे बिना सम्भव नहीं, मेरी कल्पना में केवल तुम ही हो ।।४।।

संसार मन्दिर के द्वार पर जाते हैं, किन्तु मेरी वन्दना में केवल तुम हो ।।५।।

दिन रात तेरे मुख के बिना मैं कुछ भी देखना नहीं चाहता।।६।।

मेरे दर्शन में केवल तुम ही हो, मेरे जीवन में केवल तुम हो ।।७।।

कुछ लोग (प्रभु का) नाम बहुत जपते हैं और अनासक्त होकर दोनों चरणों पर झुकते हैं ।।८।।

मेरे पूजन में केवल तुम्हीं हो, मेरे जीवन में केवल तुम हो।।९।।

यहाँ कुछ लोग समाचार या सन्देश पढ़ते हैं, अथवा अनेक प्रकार के विचार व्यक्त करते हैं ।।१०।।

मेरी बातचीत में केवल तुम ही रहती हो, मेरे जीवन में केवल तुम हो ।।११।।

ooooo

(३०)

चरता पतत्रिणाम्बरे समतामगामहम् ।
सहसा हि शून्यगह्वरे दयितामगामहम् ।।१।।
विरहानलेन दह्यमानमानसोऽभवम् ।
मदिरेक्षणे सुनिर्झरे रसतामगामहम् ।।२।।
श्रुतिमण्डलस्वरेण हीनगीतकं यथा ।
निपुणागमेन विस्वरे लयतामगामहम् ।।३।।
चिरतृष्णयार्दितो जलागमाशया अटन् ।
सुमरुस्थलेऽतिविस्तरे सरितामगामहम् ।।४।।
रसहीनदीनजीवनं नयन्नहर्निशम् ।
दयिताननें सुधाकरे कवितामगामहम् ।।५।।

भावार्थ - आकाश में विचरण करते हुए पक्षी के साथ बराबरी मैंने पा ली, एकाएक सूने घर में प्रियतमा को पा लिया ।।१।।

विरह की आग से मेरा मन जल रहा था सुन्दर झरने की भाँति मदमाती आँख में सरसता को पा लिया।।२।।

सुर लय ताल से रहित गीत जैसे कुशल कलाकार के आ जाने पर विस्वर में भी लय प्राप्त कर लेता है, उसी तरह मेरे विस्वर जीवन में लय प्राप्त हो गया है ।।३।।

चिरकाल की प्यास से परेशान जल लाभ करने की आशा से भटकता हुआ अत्यन्त फैले विशाल मरुस्थल में नदी को मैंने प्राप्त कर लिया ।।४।।

रसहीन दुःखी जीवन रातदिन बिताता हुआ मैंने प्रियतमा के मुख रूप चन्द्रमा में कविता को प्राप्त कर लिया।।५।।

ooooo

(३१)

सदा मदीय मानसं प्रतीक्षते सुखम् ।
कदापि तन्न शाश्वतं समीक्षते सुखम् ।।१।।
उपैति यात्यनुक्रमेण दामिनीप्रभम् ।

क्षणं न दर्शनाय तद् विलम्बते सुखम् ॥२॥
न कामिनीभुजानुबन्धजं मनोरमम् ।
न यामिनीन्दुरश्मिजं हि रोचते सुखम् ॥३॥
प्रमुग्धया प्रियेऽपि जल्पने क्वचिन्न हि ।
न च प्रियाङ्गनाकटाक्षवीक्षिते सुखम् ॥४॥
न पुत्रजन्मनि प्रभूतवैभवागमे ।
पदोन्नतिप्रभावजं न वर्तते सुखम् ॥५॥
न हर्म्यवाहनादिजातमात्मतुष्टिदम् ।
धनादिसञ्चयेऽपि नानुभूयते सुखम् ॥६॥
सुखं सदानुसन्दधाति जन्तुजीवनम् ।
निजात्मबोधभूमि तद्धि विद्यते सुखम् ॥७॥

भावार्थ – मेरा मन हमेशा सुख की प्रतीक्षा करता है। कभी भी वह शाश्वत सुख ठीक से नहीं देख पाता ॥१॥

सुख बिजली की चमक जैसे क्रमशः आता है और चला जाता है, क्षण भर भी देखने के लिए नहीं रुकता है॥२॥

कामिनी बाहुपाश में बँध जाने से उत्पन्न सुख मनोरम नहीं होता, और न रात के चन्द्रमा की किरण से पैदा हुआ सुख ही भाता है॥३॥

कहीं न तो प्रमुग्धा नायिका के साथ अनुकूल बातचीत में ही सुख है और न मनोरमा प्रिया की तिरछी नज़र में ही सुख है ॥४॥

न तो पुत्र जन्म में सुख है और न पर्याप्त सम्पत्ति लाभ में, न ही पदोन्नति तथा प्रभाव से उत्पन्न सुख ही रह पाता है॥५॥

न तो महल, गाड़ी आदि से उत्पन्न सुख ही आत्म सन्तोषप्रद होता है तथा बहुत धनसंग्रह में भी सुख अनुभव नहीं किया जाता है ॥६॥

प्राणी का जीवन हमेशा सुख की खोज करता फिरता है, किन्तु वह सुख तो अपने आत्मज्ञान में ही विद्यमान है ॥७॥

ooooo

(३२)

तदीयजीवनं दिशाहीनम् ।
न पाययामृतं तृषाहीनम् ॥१॥
वसुन्धरा कुटुम्बमस्माकम् ।
न जन्यमस्ति विद्विषाहीनम् ॥२॥
न विद्यया विना जनो धन्यो ।
न रत्नमिष्यते त्विषा हीनम् ॥३॥
न हृद्यमाननं विना कान्तिम् ।
न चन्द्रचारवं निशाहीनम् ॥४॥
हितं न भासते मदान्धस्य ।
किमस्ति दर्शनं दृशा हीनम् ॥५॥
स्मरातुरापि या कुलोत्पन्ना ।
न चेतसा वृणोति सा हीनम् ॥६॥

भावार्थ - उसका जीवन दिशाहीन है। प्यास रहित आदमी को अमृत पान मत कराओ ॥१॥

हमारा परिवार पूरी धरती है। विद्वेष के बिना युद्ध नहीं होता ॥२॥

विद्या के बिना आदमी धन्य नहीं हो पाता। चमक रहित रत्न (भी) इच्छा का विषय नहीं हो पाता ॥३॥

कान्ति के बिना चेहरा मन को नहीं भाता, चन्द्रमा की सुन्दरता रात के बिना नहीं होती ॥४॥

अहंकार से अन्धे आदमी को हितवचन प्रतीत नहीं होता, दृष्टि से रहित देखना क्या है ? ॥५॥

काम से पीड़ित भी जो कुलांगना होती है, वह मन से (कभी भी) कुलहीन जन का वरण नहीं करती ॥६॥

ooooo

(३३)

प्रोषितायातप्रियो लघु प्रियास्पर्शं काङ्क्षते ।
ग्रहीतुं शृङ्गारकाले तदादर्शं काङ्क्षते ।।१।।
सङ्गमस्वादानुरक्तं कामुकानां मानसम् ।
समग्रं वासन्तवातारक्तवर्षं काङ्क्षते ।।२।।
विविक्ते भ्राम्यन् प्रियोऽयं मुग्धया प्रियया समम् ।
कौमुदीमुदितां निशं नित्यं सहर्षं काङ्क्षते ।।३।।
पल्वलापः पिबत्येवायं जनोऽतिपिपासया ।
नैव कामी सङ्गमावसरे विमर्शं काङ्क्षते ।।४।।
चारु रूपं प्रियायाः सर्वदा स्यादिति चिन्तयन् ।
विशेषज्ञानामिदानीं परामर्शं काङ्क्षते ।।५।।
वेशवासं विहायापि प्रसन्नं यूनां कुलम् ।
कौतुकागारेऽङ्गनासङ्गमोत्कर्षं काङ्क्षते ।।६।।
इदानीं निःशङ्कमभिजाताबलाव्रातं सखे ।
मुद्रयासक्तं स्वकीयाङ्गप्रदर्शं काङ्क्षते ।।७।।

भावार्थ – परदेश से लौटे हुए प्रियतम शीघ्र अपनी प्रियतमा का स्पर्श चाहता है। शृंगार के समय उसका दर्पण पकड़ना चाहता है।।१।।

मिलन के स्वाद से अनुरक्त कामीजनों का मन पूरा वर्ष वसन्ती हवा से रमा हुआ चाहता है ।।२।।

मुग्धा प्रियतमा के साथ एकान्त में घूमता हुआ प्रियतम खुशी से चाँदनी से चमकीली रात हमेशा चाहता है ।।३।।

गड्ढे का पानी (भी) अत्यन्त प्यास के कारण यह आदमी पी रहा है। कामी जन संगम के समय विचार विमर्श नहीं चाहता है ।।४।।

'प्रियतमा का सुन्दर रूप हमेशा कायम रहे' यह सोचता हुआ आदमी आजकल सौन्दर्य विशेषज्ञों का सुझाव चाहता है ।।५।।

वेश्यालय को छोड़कर भी आजकल युवक-वर्ग क्लब आदि में प्रमदाओं

के साथ संगम उत्कर्ष चाहता है।।६।।

हे मित्र ! आजकल निर्भय होकर कुलीन नारी का समूह पैसा से आसक्त होकर अपने अंगों का प्रदर्शन चाहता है ।।७।।

ooooo

(३४)

वीक्ष्य वामामहो चञ्चलं मानसम् ।
योगिनोऽप्यत्र किं दुर्बलं मानसम् ।।१।।
दुर्जनाऽऽसङ्गमासाद्य यद्दुर्मदम् ।
तत्सतां सङ्गतौ निर्मलं मानसम् ।।२।।
फुल्लपुष्पं यथा शुभ्ररम्यं शुभम् ।
बाल्यकालेऽखिलं निश्छलं मानसम् ।।३।।
कोमलं सुप्रसन्नं प्रियायां रतम् ।
प्रोषिते भर्त्तरि व्याकुलं मानसम् ।।४।।
काम्यमासाद्य सद्यो मुदामास्पदम् ।
वैपरीत्ये क्षणं विह्वलं मानसम् ।।५।।
दुःख-दैन्यादधीरत्वमापद्यते ।
तत्सदा कुत्सितं निर्बलं मानसम् ।।६।।
निर्वहेज्जीवितेनापि सङ्कल्पितम् ।
तत्प्रशस्यं सखे निश्चलं मानसम् ।।७।।
नोद्विजेद्यत्प्रियं कामिनीकाञ्चनम् ।
सिद्धये कल्पते निष्कलं मानसम् ।।८।।
यत्परस्योन्नतिं नो सहेताधिकाम् ।
सर्वदा तद्धि हेयं मलं मानसम् ।।९।।
जानकीजीवनं ध्यायदेवान्वहम् ।
सर्वसौभाग्यदं मङ्गलं मानसम् ।।१०।।

भावार्थ — आह ! प्रमदा को देखकर मन चञ्चल हो जाता है। योगी जन का भी

मन इस विषय में क्यों दुर्बल है।।१।।

दुर्जन की संगति पाकर जो मन दुर्मद होता है वह सज्जनों की संगति में निर्मल रहता है ।।२।।

बचपन में खिले हुए फूल की तरह स्वच्छ, मनोभावन मंगलकारक सब मन निर्मल होता है ।।३।।

(प्रियतम के संग) प्रियतमा का मन प्रेम में रमा हुआ प्रसन्न और कोमल होता है। प्रियतम के दूर चले जाने पर वही मन व्याकुल हो जाता है ।।४।।

यह मन मनोनुकूल पाकर सीधे खुशियों का घर हो जाता है, विपरीत स्थिति में पल भर में परेशान हो जाता है ।।५।।

(जो) दुःख और गरीबी में धैर्य खो बैठता है,वह मन हमेशा निन्दित और निर्बल होता है ।।६।।

जो जी जान लगाकर अपने दृढ निश्चय का निर्वाह करे, हे मित्र ! वह हमेशा प्रशंसनीय निश्चल मन है ।।७।।

कामिनी और काञ्चन (सोना) जिसे उद्विग्न नहीं करे, वह निष्कलुष मन सफलता के लिए अनुकूल है।।८।।

जो दूसरे की अधिक उन्नति को नहीं सहन कर सके, हमेशा उस मानसिक दोष को त्याग देना चाहिए।।९।।

जो प्रतिदिन सब सौभाग्य को प्रदान करने वाले श्रीराम का ध्यान करता हुआ रहे, वह मन मंगलदायक या शुभ है ।।१०।।

ooooo

(३५)

कयाचिदद्य मुग्धया साकम् ।
क्षणं नयामि स्निग्धया साकम् ।।१।।
कलिन्दनन्दिनीतटाभोगे ।
यथा हरिः स राधया साकम् ।।२।।

निजाङ्घ्रिचापलं तदीयं यत् ।
हृतं दृशापि तद् धिया साकम् ।।३।।
समालपन्त्यसंशयं याऽऽसीत् ।
नताननास्ति सा ह्रिया साकम् ।।४।।
कटुक्वणन्त्यनुक्षणं याऽभूत् ।
कलस्वनाऽस्ति सा भिया साकम् ।।५।।
प्रणम्यपूज्यमान्यहृद्द्वयेषु ।
निरीक्षतेऽद्य तृष्णया साकम् ।।६।।
मुधाऽपनीतजीवनं मन्ये ।
यतो गतं न तत् तया साकम् ।।७।।

भावार्थ - किसी प्रेमभरी भोली भाली नायिका के साथ मैं कुछ पल बिता रहा हूँ ।।१।।

यमुना के किनारे के परिसर में जैसे वे भगवान् कृष्ण राधा के साथ होते थे ।।२।।

(किशोरावस्था में) जो उसके अपने पैर की चपलता थी उसे बुद्धि के साथ दृष्टि ने हर लिया। अर्थात् बचपन में जो पैर की चंचलता थी वह अब नज़र में चली आई है ।।३।।

जो निर्भय होकर बातचीत करती रहती थी, वही अब (यौवन में) लज्जा के साथ चेहरे को झुकाई रहती है।।४।।

प्रतिपल कड़वी आवाज़ से जो खनकती होती थी, वही अब मीठी आवाज़ वाली भय के साथ हो चुकी है।।५।।

प्रणाम करने योग्य, पूजनीय, आदरणीय तथा प्रेमीजनों में सबको अब वह प्यासी नज़र से देखती है ।।६।।

चूँकि वह मेरा जीवन उसके बिना बीता, अतः मैं उसे बेकार में बीता हुआ मानता हूँ ।

ooooo

(३६)

तदीयं मुखं चारु चन्द्रोपमेयम् ।
तदक्षिद्वयं पद्मयुग्मोपमेयम् ।।१।।
पदं मन्दमन्दं निधत्ते सखीयम् ।
अपाङ्गक्षणं तीक्ष्णवाणोपमेयम् ।।२।।
कुचद्वन्द्वभारात्पनम्राङ्गमस्याः ।
फलव्यापिचूतस्य शाखोपमेयम् ।।३।।
नितम्बं बृहन्मांसलं भाति तस्याः ।
मनोजस्य सद्यो रथाङ्गोपमेयम् ।।४।।
सुरम्यं च जङ्घाद्वयं पुष्टमस्याः ।
अनङ्गाध्वरे हेमरम्भोपमेयम् ।।५।।
वचो मिश्रमाधुर्यमाह्लादयितृ ।
वने कोकिलाकूजितेनोपमेयम् ।।६।।
विधेः कौशलोत्कर्षपर्यायभूतम् ।
तदीयं वपुश्चास्ति केपोपमेयम् ।।७।।

भावार्थ - उसका सुन्दर चेहरा चन्द्रमा के समान है। उसकी दोनों आँखें दो कमलों के समान हैं ।।१।।

यह सखी धीरे-धीरे कदम रखती है, इसका कटाक्ष तेज बाण के समान है ।।२।।

इसका शरीर दोनों स्तनों के भार से थोड़ा झुका है वह फल से भरी हुई आम की डाल के समान है ।।३।।

उसका विशाल मांसल नितम्ब शोभ रहा है, जो साक्षात् कामदेव के रथ के पहिये की तरह है ।।४।।

इसकी पुष्ट सुन्दर दोनों जांघें, कामयज्ञ में स्वर्णिम केले के थम्भ के समान है ।।५।।

(इसकी) वाणी मिटास भरी आह्लादित करने वाली है, जो जंगल में कोयल की कूक की भाँति है ।।६।।

विधाता के विश्वनिर्माणकौशल की पराकाष्ठा का पर्याय बना उसका शरीर किसके समान है ? अर्थात् उसका शरीर अनुपम है ।।७।।

ooooo

सामगानं गीयतामिह मन्दमन्दम् ।
विस्वरः परिहीयतामिह मन्दमन्दम् ।।१।।
शैशवं वधिरीकृतं ध्वनिभिर्विचित्रैः ।
अद्य कलमाधीयतामिह मन्दमन्दम् ।।२।।
कुड्मलं विकसेदशेषमिदं यथास्वम् ।
क्षणं तत्प्रविधीयतामिह मन्दमन्दम् ।।३।।
जातिधर्मविवाददूषितचित्तबन्धो ।
सद्वचो ननु पीयतामिह मन्दमन्दम् ।।४।।
व्याकुलं कोलाहलैरखिलं समन्तात् ।
शान्तिरधुना नीयतामिह मन्दमन्दम् ।।५।।
भारतं प्रतिभारतं बहुधा श्रुतं तत् ।
दीनता ह्यपनीयतामिह मन्दमन्दम् ।।६।।
विद्ययाऽमृतमश्नुते तदवेत्य सर्वैः ।
जनैः सम्यगधीयतामिह मन्दमन्दम् ।।७।।

भावार्थ - शान्ति गीत यहाँ धीरे-धीरे गायें। स्वरभंग यहाँ धीरे- धीरे बंद कर दें ।।१।।

विचित्र कोलाहलों से बचपन तो बहरा कर दिया गया । अब धीरे-धीरे मधुर ध्वनि ले आएँ ।।२।।

सारी कलियाँ स्वाभाविक रूप से जिस तरह खिल सके उस पल की व्यवस्था धीरे-धीरे करनी चाहिए ।।३।।

हे जाति धर्म के विवाद से दूषित मन वाले बन्धु ! सही बात धीरे-धीरे पी लो अर्थात् ध्यान से सुनो ।।४।।

सब ओर कोलाहलों से सब व्याकुल है । अब तो शान्ति गीत यहाँ धीरे-धीरे गा लें ।।५।।

'भारत प्रतिभा में (भी ज्ञान में) लगा रहा है' यह तो बहुत सुन चुका, अब तो यहाँ गरीबी धीरे-धीरे दूर करें ।।६।।

'विद्या से अमृत प्राप्त करता' यह जानकर सब लोग सही ढंग से विद्याध्ययन धीरे-धीरे आरम्भ करें ।।७।।

०००००

(३८)

विशालवाङ्मयं मयाऽधीतम् ।
कवित्वकौशलं धियाऽधीतम् ।।१।।
प्रभूतवैभवावलिप्तानाम् ।
मनश्चलं धनाय नाधीतम् ।।२।।
अवाप्तमात्रतोषशीलानाम् ।
सतां मनोऽचलं च नाधीतम् ।।३।।
शिशोः स्वमातृतर्जनं हृद्यम् ।
विमातृप्रेम नेति नाधीतम् ।।४।।
महाततायिनां समाजेऽस्मिन् ।
वचो हि दैहिकं धियाऽधीतम् ।।५।।
प्रियैः समं सकाममुग्धानाम् ।
कटाक्षभाषितं ह्रियाऽधीतम् ।।६।।
प्रजाजनानुरञ्जने दक्ष-
सुनेतृचापलं श्रियाऽधीतम् ।।७।।

भावार्थ - मैंने विशाल साहित्य का अध्ययन किया। कवित्व की कला बुद्धि से पढ़ी ।।१।।

पर्याप्त सम्पत्ति के घमण्ड में चूर लोगों का धन के लिए चञ्चल मन को नहीं पढ़ा ।।२।।

जितना मिल जाए उसी से खुश रहने वाले सज्जनों का अचल मन नहीं पढ़ा ।।३।।

अपनी माँ की डाँट (भी) बच्चे को प्रिय होता, किन्तु सौतेली माँ का प्रेम नहीं, यह मैंने नहीं पढ़ा ।।४।।

महान् आतंकवादियों के इस समाज में शारीरिक भाषा बुद्धि से पढ़ ली ।।५।।

प्रेमियों के साथ कामुक नारियों के कटाक्ष की भाषा लज्जा से पढ़ ली ।।६।।

प्रजा के लोगों को प्रसन्न करने में चतुर सुन्दर नेताओं की चालाकी उनकी सम्पत्ति से पढ़ ली ।।७।।

०००००

(३६)

पुरा श्रुतं बहु प्रियं वृत्तम् ।
प्रिये निशम्यतामिदं वृत्तम् ।।१।।
वपु र्विनिद्ररोम ते भावि ।
विभाव्य चाधुनातनं वृत्तम् ।।२।।
विवाहपूर्वमद्य कन्याभिः ।
प्रियैः समं तिथीकृतं वृत्तम् ।।३।।
नृभिश्च सङ्गमानुकूलानाम् ।
प्रतिक्षणं परीक्षणं वृत्तम् ।।४।।
दिनैस्त्रिभिश्चतुर्भिरष्टाभिः ।
विवाहबन्धनक्षतं वृत्तम् ।।५।।
गृहेषु गह्वरेषु गोष्ठीषु ।
समस्ति सङ्गमक्षणं वृत्तम् ।।६।।
विदेशपद्धतिं दधानानाम् ।
नृणामुदारदर्शनं वृत्तम् ।।७।।
प्रियेण सङ्गमानुकूल्याय ।
पतिप्रताडनामयं वृत्तम् ।।८।।

भावार्थ - पहले बहुत प्रिय कथा (कहानी या घटना) सुनी। हे प्रिये यह कथा सुनो ।।१।।

आजकल की घटना सुनकर तेरा शरीर रोमाञ्चित हो जाएगा ।।२।।

अविवाहित लड़कियों द्वारा प्रेमियों के साथ निश्चित अवधि के लिए विवाह से पहले तिथि निर्धारित कर रहने की घटना (डेट पर जाना) ।।३।।

लोगों के द्वारा संगम के लायक नारियों की स्पर्धा में जाँच करने की घटना ।।४।। (सेक्सी के अनुसार स्तर निर्धारण)

तीन, चार या आठ दिनों में विवाह बन्धन के विच्छेद (तलाक) की घटना ।।५।।

घरों में, गुफाओं में, सभाओं में, यत्र तत्र संगम का अवसर मिल जाता है, यह घटना ।।६।।

विदेशी सभ्यता को अपनाने वाले लोगों का उदारवादी दृष्टिकोण की घटना ।।७।।

प्रेमी के साथ संगम की सुविधा के लिए पति की प्रताड़ना भरी घटना ।।८।।

ooooo

(४०)

चिरात् समागतो निजं ग्रामम् ।
लभे न तं पुरातनं ग्रामम् ।।१।।
मिलिन्दवृन्दमब्जलीनं यत् ।
अबोधयद्रविश्च तं ग्रामम् ।।२।।
द्विजाः प्रभातसन्ध्ययासक्ताः ।
जलेऽभवंश्च यत्र तं ग्रामम् ।।३।।
सदावगुण्ठनं कुलस्त्रीणाम् ।
श्रियं व्यधाच्च यत्र तं ग्रामम् ।।४।।
निधाय कामिनीकुलं कुम्भान् ।
नयेत्सगीतमम्बु तं ग्रामम् ।।५।।
विलिप्तगोमयाजिरं यत्र ।
प्रतिगृहं भवेच्च तं ग्रामम् ।।६।।
सघण्टिकान् वृषान् पुरस्कृत्य ।
जनाः कृषिं व्रजन्ति तं ग्रामम् ।।७।।
वितर्त्तमानगोकुलं सायम् ।
रजोमयं करोति तं ग्रामम् ।।८।।

भावार्थ - बहुत दिन बाद अपने गाँव आया। मैं उस पुराने गाँव को नहीं पा रहा हूँ ।।१।।

जहाँ कमल के कोश में लीन भ्रमर समूह को सूरज जगाया करता था, उस गाँव को (नहीं पा रहा हूं) ।।२।।

जहाँ द्विजगण प्रातःकालीन सन्ध्यावन्दन में लगे हुए जल में होते थे, उस गाँव को ।।३।।

जहाँ सदा कुलांगनाओं की घूँघट शोभा पाती थी, उस गाँव को।।४।।

जहाँ प्रमदा जन घड़ों को लेकर गीत गाती हुई जल ले जाती थी, उस गाँव को ।।५।।

जहाँ गाय के गोबर से लिपा हुआ आंगन प्रत्येक घर में होता था, उस

गाँव को ।।६।।

जहाँ घंटी बन्धे हुए बैलों को आगे कर लोग खेती को जाते हैं, उस गाँव को ।।७।।

जहाँ शाम को लौटता हुआ गाय समूह (पूरे गाँव को) धूलिमय कर देता है, उस गाँव को ।।८।।

ooooo

(४१)

शोभमानं स्यादिदं ग्राम्यं गृहम् ।
सर्वसौविध्यं शुभं ग्राम्यं गृहम् ।।१।।
कारुकर्मख्यातमातनुतां मुदम् ।
पुत्रमित्रकलत्रकाम्यमिदं गृहम् ।।२।।
स्वीयमभिलाषं प्रियं चिरसञ्चितम् ।
पूर्णमातनुतामिदं ग्राम्यं गृहम् ।।३।।
देवगुरुविप्रप्रसादसमन्वितम् ।
धर्मधाम शमप्रदं ग्राम्यं गृहम् ।।४।।
आशिषा जननीजनकयोः सुन्दरम् ।
भूतिलसितं कामदं ग्राम्यं गृहम् ।।५।।
आतिथेयमनल्पविश्रामास्पदम् ।
उन्नतिं दिशदन्वहं ग्राम्यं गृहम् ।।६।।
कल्पतामखिलाशिवक्षतयेऽनिशम् ।
बान्धवैरनुशंसितं ग्राम्यं गृहम् ।।७।।
वास्तुविद्यावताऽऽशंसितमद्भुतम् ।
सर्वसौहार्दप्रदं ग्राम्यंगृहम् ।।८।।

भावार्थ – यह ग्रामीण घर सुन्दर हो, इसमें सब सुविधा हो यह ग्रामीण घर शुभ हो ।।१।।

कारीगरी की कुशलता से उत्कृष्ट हो, पुत्र पौत्र तथा पत्नी आदि का मनोवाञ्छित यह ग्रामीण घर खुशी बढ़ावे ।।२।।

बहुत दिन से संजोयी हुई अपनी प्रिय अभिलाषा को यह ग्रामीण घर पूर्ण करे ।।३।।

देवता, गुरु, विप्र के आशीर्वाद से युक्त धर्म का आश्रय यह ग्रामीण घर शान्तिप्रद हो ।।४।।

माता और पिता के आशीर्वाद से यह ग्रामीण घर सुन्दर ऐश्वर्य से सुशोभित इच्छा को पूर्ण करने वाला हो।।५।।

अतिथियों के लिए अनुकूल अत्यन्त विश्राम का स्थान, अभ्युद प्रद यह ग्रामीण घर हो ।।६।।

सतत समस्त अशुभ निवारण के लिए यह ग्रामीण घर अनुकूल हो तथा बन्धु बान्धवों के द्वारा प्रशंसित हो।।७।।

वास्तुशास्त्र विशेषज्ञ के द्वारा अनुशंसित अद्भुत सब सौभाग्यदायक यह ग्रामीण घर हो ।।८।।

ooooo

(४२)

ग्राम्यमनुस्मरणीयम् गीतम् ।
प्रावृषि कृषिकमनीयं गीतम् ।।१।।
शालिविरोपणकर्मणि कुशलैः ।
कृषीबलैर्गानीयम् गीतम् ।।२।।
क्षेत्रविलेखनकलाप्रवीणैः ।
हलवाहै रटनीयं गीतम् ।।३।।
हलकर्षणकृतखेदहरं यत् ।
वृषभाणां रमणीयं गीतम् ।।४।।
क्षेत्रमध्यरेखामधितिष्ठत् -
क्षेत्रपतेर्ध्यानीयं गीतम् ।।५।।
श्रावं श्रावं मनोरमं यत् ।

पथिकानां त्वरणीयं गीतम् ॥६॥

कृषिकर्मणि साफल्यमवाप्तुम् ।

वृष्टिदेवजपनीयं गीतम् ॥७॥

कृषिफलजीविजनानामेवम् ।

जीवनमनुकरणीयं गीतम् ॥८॥

भावार्थ - ग्रामीण गीत स्मरण करें। वर्षा ऋतु में खेती के काम में वह गी मनोरम होता है ॥१॥

धान की रोपनी के काम में दक्ष किसान मज़दूरों के द्वारा गाने योग्य व गीत होता है ॥२॥

वह गीत खेत जोतने की कला में कुशल मज़दूर लोग गाते हुए हल चल हैं ॥३॥

बैलों के लिए वह गीत हल खींचने की थकान को दूर करने वाला मनो होता है ॥४॥

वह गीत खेत के मेर पर बैठे खेत के मालिकों का ध्यान खींचने वा होता है ॥५॥

सुन सुनकर मन को रमाने वाला जो वह गीत है, परदेशियों (प्रियत से दूर रहने वाले यात्रियों) को जल्दी-जल्दी (प्रियतमा के पास) जाने के लिए प्रे करने वाला है॥६॥

खेती में सफलता के साथ पूरी उपज पाने हेतु वह गीत वृष्टिदेव मनाने के लिए जपने योग्य या गाने योग्य माना जाता है ॥७॥

खेती की उपज पर जीवित रहने वाले किसानों का जीवन जैसे अनुकर करने योग्य होता, वैसा ही वह गीत भी अनुकरणीय या गाने योग्य है ॥८॥

ooooo

(४३)

शिशुवदनं सस्मितं मनोज्ञम् ।

युवतिकुलं विस्मितं मनोज्ञम् ॥१॥

पवनप्रेरितमलसमन्दमिव ।

व्रततिदलं कम्पितं मनोज्ञम् ।।२।।

विपिनमनल्पविधातिमधुस्वर-
खगकुलरवगुञ्जितं मनोज्ञम् ।।३।।

गिरिगहनं वनवासिरघुपतेः ।
चरणकमललङ्घितं मनोज्ञम् ।।४।।

सुरधुनिशोभितशम्भुशिरो ननु ।
शशिशकलालङ्कृतं मनोज्ञम् ।।५।।

श्रमशिथिलश्रमिकार्जितमपि यत् ।
किमपि ततः सञ्चितं मनोज्ञम् ।।६।।

मनुजदैन्यमभिशाप इतीदम् ।
जननायकचिन्तितं मनोज्ञम् ।।७।।

श्रुतिविहितं परहितं कर्म शुभ-
मिति मनसा स्वीकृतं मनोज्ञम् ।।८।।

विपणिरचितमाल्यं क्षुधितस्य न ।
कनकरत्नमण्डितं मनोज्ञम् ।।९।।

सुरयुवतीपरिवृतमपि सदनम्
न हि यतये कल्पितं मनोज्ञम् ।।१०।।

हलपद्धतिपतिताङ्कुरिवीजम् ।
कृषककुलालोकितं मनोज्ञम् ।।११।।

भावार्थ - मुस्कुराया हुआ बच्चे का चेहरा मनोरम होता है। प्रमदावर्ग चकित मनोहर है ।।१।।

हवा के द्वारा प्रेरित अलसाया मन्द जैसा लता-पल्लव कम्पित मनोहर होता है ।।२।।

बहुत प्रकार की मीठी आवाज़ वाले पक्षियों के कलरव से गुञ्जित वन मनोहर होता है ।।३।।

वनवास के समय श्री राम के पदकमल से मापा गया पर्वत गुफा मनोहर

होता है ।।४।।

गंगा से सुशोभित भगवान् शिव का मस्तक चन्द्रकला से अलंकृत होकर सुन्दर होता है ।।५।।

मिहनत से थका मजदूर जो कुछ कमाता है, उससे जो कुछ भी थोड़ा सा वह बचाकर जमा करता है वह अच्छा है।।६।।

"लोगों की गरीबी अभिशाप है" यह यदि नेताओं द्वारा चिन्ता का विषय हो, तो अच्छा है ।।७।।

दुकान में सजाई माला यदि सोना और रत्न से जड़ी हुई है भी तो वह भूखे को अच्छी नहीं लगती ।।९।।

अप्सराओं से घिरा हआ घर भी संन्यासी के लिए मनोहर नहीं हो पाता ।।१०।।

(खेत में) हल की दरार के बीच पड़ा हुआ बिचड़ा जब अंकुरित होकर किसानों द्वारा देखा जाता है, वह बहुत ही सुन्दर होता है ।।११।।

ooooo

(४४)

नयामि भाविचिन्तया नक्तम् ।
गतं स्मराम्यनिद्रया नक्तम् ।।१।।
उपैति किं न मामलं स्वापः ।
इति प्रतर्कये धिया नक्तम् ।।२।।
उलूकचौरदस्युबाहुल्यम् ।
बहिर्न सञ्चरेद् भिया नक्तम् ।।३।।
कलासमग्र एष शुभ्रांशुः ।
न धौति सर्वदा श्रिया नक्तम् ।।४।।
दिनानि चन्द्रिका च चत्वारि ।
पुनस्ततं तमिस्रया नक्तम् ।।५।।
दिनं तु दुर्दिनं हि दीनस्य ।
नयत्यसौ बुभुक्षया नक्तम् ।।६।।

हसत्युपैति वीक्षते वक्रम् ।
वियापयेत्प्रिया ह्रिया नक्तम् ।।७।।
दिवा प्रतीक्षते प्रिया पान्थम् ।
नयत्यसौ पिपासया नक्तम् ।।८।।
रहः प्रियेण कामिनीक्रीड़ा ।
प्रलम्बते विना ह्रिया नक्तम् ।।९।।
प्रियोऽपि कोऽपि मानिनीं मुग्धाम् ।
प्रबोधयेत्सपर्यया नक्तम् ।।१०।।

भावार्थ - भावी चिन्ता से रात बिताता हूँ। बीती बात को याद करता हूँ और नींद के बिना ही रात काटता हूँ।।१।।

मुझे क्यों नहीं पर्याप्त नींद आती, यह मैं बुद्धि से रात भर तर्क वितर्क करता हूँ ।।२।।

उल्लू, चोर डकैतों की बहुलता है, इसलिये डर से रात को बाहर नहीं घूमना चाहिए ।।३।।

समस्त कलाओं से पूर्ण भी चन्द्रमा हमेशा अपनी शोभा सम्पत्ति से रात को धवल नहीं करता ।।४।।

चार दिनों की चाँदनी होती, फिर तो अन्धकार से छन्न रात होती है ।।५।।

गरीब का दिन तो दुर्दिन होता ही है, वह रात (भी) भूख से बिताता है ।।६।।

हँसती है, समीप आती है, चेहरा देखती है, प्रियतमा रात (भी) लज्जा से बिता देती है ।।७।।

दिन में प्रियतमा परदेशी पथिक की प्रतीक्षा करती, वह रात भी प्यास से (प्रिय मिलन आशा से) गुजार देती है ।।८।।

रात को एकान्त में लज्जा के बिना प्रियतम के साथ नायिका की काम क्रीड़ा बड़ी लम्बी हो जाती है ।।९।।

कोई प्रियतम भी मुग्धा प्रमदा प्रियतमा को बड़े ही आदरभाव से मनावे ।।१०।।

ooooo

(४५)

प्रभातधाम भानवं चित्रम् ।
विभाति चान्वहं नवं चित्रम् ।।१।।
तमो निपीय नैशमन्धं तत् ।
पुरोऽरुणं नभो नवं चित्रम् ।।२।।
निशाकपालिनीसरागास्यम् ।
तमो निपीय दानवं चित्रम् ।।३।।
निजानुरक्तवाससा प्राची ।
वृणोति वर्त्म भानवं चित्रम् ।।४।।
कलाधारः समीक्ष्य रक्ताभम् ।
रविं वगाहतेऽर्णवं चित्रम् ।।५।।
प्रियानुरागमद्वयं दिव्यम् ।
रविः प्रशास्ति मानवं चित्रम् ।।६।।

भावार्थ - सूरज का प्रातःकालीन तेज सुन्दर या विचित्र होता है। प्रतिदिन व नया और विस्मयकारी होता है।।१।।

रात के काला अन्धकार का पान करके जो पूरब नया लाल आकाश व कर देता है वह विस्मयकारी है।।२।।

अन्धकार रूप विचित्र राक्षस का संहार कर रात रूप योगिनी का चेह लाल है ।।३।।

अपने रंगे हुए वस्त्र से पूरब दिशा सूरज के मार्ग को सजा रही ।।४।।

चन्द्रमा सूरज को लाल (क्रोध में) देखकर समुद्र में (डर से) डूब रह है, यह आश्चर्य है ।।५।।

अद्वितीय दिव्य प्रियतमा का प्रेम सूरज आदमी को सिखा रहा है। य आश्चर्य है ।।६।।

ooooo

(४६)

काञ्चनाभं रम्यगात्रं मे प्रियम् ।
त्वदीयं मन्दस्मितं बाले प्रियम् ।।१।।
रूपमनवद्यं विशद्यं चाद्वयम् ।
कर्षति प्रसभं मनो जगते प्रियम् ।।२।।
त्वदीयं वत चकितहरिणीप्रेक्षणम् ।
योगिनामपि कुलं तन्मनुते प्रियम् ।।३।।
वीक्ष्य प्रत्यागतं मृदुकुसुमाकरम् ।
कुलं प्रमदानां पुना रमते प्रियम् ।।४।।
श्यामलं नक्तं निशानाथो यथा ।
म्लानमबलास्यं प्रियः कुरुते प्रियम् ।।५।।
प्रियानेत्राङ्कितं हालाभाजनम् ।
नायकः सहभोजनं स्वदते प्रियम् ।।६।।
ग्रामदेशे स्वश्रमेण कृषीबलः ।
मृत्तिकामपि काञ्चनं कुरुते प्रियम् ।।७।।

भावार्थ - हे बाले ! तेरा स्वर्णिम सुन्दर शरीर मुझे प्रिय है, तेरी मन्द मुस्कान प्रिय है ।।१।।

अनिन्दनीय सुभग अद्वितीय तेरा रूप हठात् मन को खींच लेता है वह रूप संसार को प्रिय होता है ।।२।।

तेरा चौंकी हरिणी जैसा चञ्चल जो चितवन है, उसे योगियों का समूह भी प्रिय मानता है ।।३।।

लौटे हुए प्रिय वसन्त ऋतु को देखकर युवतियों का समूह फिर से प्रियतम में रम जाता है ।।४।।

जिस तरह अन्धेरी रात को चन्द्रमा मनोरम बना देता है, वैसे ही मलिन प्रियतमा के चेहरे को प्रियतम मनोहर बना देता है ।।५।।

प्रेमिका की आँख से प्रतिबिम्बित मदिरा के प्याले को नायक (तदनुकूल)

भोजन में बड़ी स्वाद पीता है ।।६।।

ग्रामीण क्षेत्र में किसान अपने परिश्रम से मिट्टी को भी प्रिय सोना बना देता है ।।७।।

ooooo

(४७)

प्रावृषाविलं प्रयाति रंहसा नदीजलम् ।
कामिनीमनो यथा स्मरार्दितं हि चञ्चलम् ।।१।।
कामिनां मनो वयोविवेकमद्य मुञ्चति ।
षट्पदो मधुव्रतोऽपि किं प्रयाति कुड्मलम् ।।२।।
वैभवावलिप्त एष भूरिभोगमश्नुते ।
पादपः फलान्वितः किमत्ति तन्निजं फलम् ।।३।।
हिंस्रजन्तुसङ्कुले वने वसन् मृगो मृदुः ।
सद्वचोभिरप्यसौ जनो जहाति किं मलम् ? ।।४।।
कोषसञ्चयं विधाय नायको विमुह्यति ।
दूयमानमद्य किं बिभर्त्यसौ कृषीबलम् ।।५।।
ग्राम्यजीवनेऽधुनापि दैन्यकल्मषग्रहः ।
नायको निमील्य चक्षुषी कृतं च वेत्त्यलम् ।।६।।
ग्रामवासिनां कुलं नवेऽपि विश्ववैभवे ।
व्योमवर्ति शस्यसम्पदे प्रतीक्षते जलम् ।।७।।
जातिधर्ममूलकेन भाषणेन सर्वतः ।
भेदमादधत्प्रजासु राजनीतिमद्वदलम् ।।८।।

भावार्थ – जैसे कामिनी का मन काम पीड़ित और चञ्चल होता है, उसी तरह बरसात के गंदा नदी का पानी तीव्र गति से भाग रहा है ।।१।।

कामुक लोगों का मन आजकल उमर का अन्तर भी छोड़ देता है। पराग का व्रती भ्रमर क्या कली के पास जाता? ।।२।।

धन के मद में चूर यह आदमी बहुत प्रकार का भोग विलास भोगता है,

किन्तु फलों से लदा हुआ पेड़ क्या स्वयं वह फल खाता है ? ।।३।।

भयानक जानवरों से भरे जंगल में निवास करता हुआ हरिण कोमल स्वभाव का होता है किन्तु क्या यह आदमी सदुपदेशों से भी अपना दोष छोड़ पाता है ? ।।४।।

अपने खज़ाने का संग्रह कर (भरकर) नायक (नेता) मुग्ध है। दुःखी होते हुए (क्षीण होते हुए) किसान को क्या वह भरण-पोषण कर पाता है ? ।।५।।

ग्रामीण जीवन में अभी भी गरीबी और गन्दगी का ग्रह व्याप्त है। नेता दोनों आँखें बन्द कर 'जो कर दिया' उसे काफी समझ लेता है।।६।।

ग्रामवासियों का वर्ग नवीन आर्थिक समृद्धि होने पर भी अपनी फसल की सम्पन्नता के लिए आकाशवर्ती जल की प्रतीक्षा करता है ।।७।।

राजनीतिक दल जाति और धर्म मूलक भाषण से सब ओर प्रजाओं में (जनता में) फूट डाल रहा है ।।८।।

ooooo

(४८)

स्वातिविन्दुं जलदगलितं चातकोऽयम् ।
याचते भुवि नैव विततं चातकोऽयम् ।।१।।
स्वादुवारिविभूषितः सरितां प्रवाहः ।
वर्त्ततां न हि काङ्क्षते तं चातकोऽयम् ।।२।।
कोटिपतिरिव भातु भुवि रत्नाकरोऽपि ।
वीक्षते न सगर्व एतं चातकोऽयम् ।।३।।
कूपवापीपल्वलेषु यदम्बु मधुरम् ।
तदपि मनुतेऽपथ्यमहितं चातकोऽयम् ? ।।४।।
खगा बहुविटपा यथा विपिने वसन्तु ।
नाम धत्ते साधु विदितं चातकोऽयम् ।।५।।
प्राकृताः प्रकृता लसन्तु सरोवरास्ते ।
याचते निजभागविहितं चातकोऽयम् ।।६।।
स्वातिभे वर्षति कदाचिन्नैव मेघः ।
वर्त्ततां तृषितोऽपि सततं चातकोऽयम् ।।७।।

भावार्थ - यह चातक (पक्षी) मेघ से गिरी स्वाती नक्षत्र की बूँद मांगता है। यह चातक जमीन पर फैले पानी को नहीं चाहता।।१।।

नदियों का प्रवाह स्वादिष्ट पानी से सुशोभित रहे, किन्तु उसे यह चातक नहीं चाहता ।।२।।

करोड़पति की तरह पृथ्वी पर समुद्र शोभित होवे, गर्व के साथ यह चातक इसे (समुद्र को) नहीं देखता।।३।।

कुँआ, तालाब तथा गड्ढों में जो मीठा पानी है उसे भी यह चातक अपथ्य तथा अहितकर मानता है ।।४।।

चिड़ियाँ अनेक वृक्षों वाला होते हुए भी जंगल में निवास करे। किन्तु सुन्दर और विख्यात नाम यह चातक ही धारण करता है ।।५।।

स्वाभाविक तथा कृत्रिम वे सरोवर सुशोभित होवें किन्तु यह चातक अपने हिस्से की मांग ही करता है ।।६।।

स्वाती नक्षत्र में कभी मेघ एकदम नहीं बरसता है, चाहे यह चातक सदा प्यासा ही क्यों न रहे ।।७।।

ooooo

(४६)

विन्दुमात्रं स्वातिमेघं याचते ।
चातकस्तृषितोऽपि नाऽलं याचते ।।१।।
वर्त्तितां वारांनिधी रत्नाकरः ।
कः पिपासाशान्तये तं याचते ।।२।।
मोदमाना महान्तो विलसन्तु ते ।
जनोऽयं जीवनोपायं याचते ।।३।।
पद्मकोशे मधु स्वदमानोऽप्ययम् ।
षट्पदो भानुप्रकाशं याचते ? ।।४।।
ग्राम्यगीतस्यापि शब्दः शोभनः ।
कवेः सद्भावं सदर्थं याचते ।।५।।

दुर्भगा दीनापि माता दुर्बला ।
सस्मितं निजशिशोरास्यं याचते ॥६॥
अस्मदीयोद्यानमतिशीतार्दितम् ।
साम्प्रतं मलयाद्रिवातं याचते ॥७॥

भावार्थ - चातक स्वाती नक्षत्र से बूँद मात्र मांगता है। प्यासा भी चातक अधिक कुछ नहीं मांगता ॥१॥

समुद्र भले जलों का खज़ाना रहे, प्यास बुझाने के लिए कौन उससे (समुद्र से) मांगता है ? ॥२॥

वे बड़े लोग मौज मस्ती मनाते हुए खुश होते रहें। यह आदमी (गरीब) केवल अपने जीने का सहारा मांगता है॥३॥

(रात को) कमल के कोश में पराग का आस्वादन करता हुआ भी यह भौंरा सूर्य की रौशनी चाहता है ॥४॥

ग्राम्य गीत का भी शब्द सुन्दर होता है, केवल कवि का सुन्दर भाव और सही अर्थ वह शब्द मांगता है अर्थात् ग्राम्य गीत का सुन्दर शब्द भी जब अच्छे कवि के सुन्दर भाव और अर्थ से समन्वित होता है तो सुन्दर कविता बन जाता है ॥५॥

अभागिन गरीब दुबली माँ भी मुस्कुराता अपने बच्चे का चेहरा मांगती है ॥६॥

हमारा बगीचा अत्यन्त ठंढ से मुर्झा गया है। इस समय वह मलय पर्वत की हवा मांगता है ॥७॥

ooooo

(५०)

स्मितं त्वदीयमुत्सवं मन्ये ।
मितं वचोऽपि गौरवं मन्ये ॥१॥
पुरो मुदा मरालिकागत्याः ।
अपाङ्गवीक्षितं शिवं मन्यं ॥२॥
प्रिये ! तवाधरामृतस्वादम् ।
समस्तजन्मवैभवं मन्ये ॥३॥

प्रिये कृतागसि प्रमुग्धायाः ।
हठं क्रुधाऽपि मार्दवं मन्ये ।।४।।
मदस्खलं मुहुर्मुहुर्मानम् ।
तव स्वभावशैशवं मन्ये ।।५।।
तवालकै र्निलीनमास्यं तद् ।
घनावृताब्जबान्धवं मन्ये ।।६।।
करद्वयं च कोमलं हृद्यम् ।
वसन्तकम्रपल्लवं मन्ये ।।७।।
त्वदीयनेत्रविम्बितं पात्रम् ।
मनोरमं कृतासवं मन्ये ।।८।।
त्वदीयपादलब्धसारूप्यम् ।
प्रियेऽब्जमुच्चवैभवं मन्ये ।।९।।
समीक्ष्य धातृकौशलं दिव्यम् ।
वपुः कलोच्चयोद्भवं मन्ये ।।१०।।
त्वदीयरूपसम्पदाख्याने ।
प्रिये ! स्वशब्दलाघवं मन्ये ।।११।।

भावार्थ - तेरी मुस्कान मैं त्योहार मानता हूँ। तेरा अल्प वचन भी मैं (अपना) गौरव मानता हूँ ।।१।।

सामने खुशी से हंसी की गतिवाली प्रियतमा का कटाक्ष मैं शुभ मानता हूँ ।।२।।

हे प्रिये ! तेरे अधर सुधा की स्वाद को मैं पूरे जीवन की सम्पत्ति मानता हूँ ।।३।।

अपराधी प्रियतम के ऊपर मुग्धा नायिका का क्रोध से किया हुआ हठ भी मैं कोमलता मानता हूँ ।।४।।

मदस्खलन (बाचतीत में भटकना) बार-बार रूठना तेरे स्वभाव की बचपना मानता हूँ ।।५।।

तेरे खुले बालों से ढका हुआ वह चेहरा बादल से ढका चन्द्रमा मानता हूँ ।।६।।

दोनों हाथ कोमल और मनोहर हैं, जिन्हें मैं वसन्त ऋतु का कोमल किसलय मानता हूँ ।।७।।

तेरी आँख से प्रतिविम्बित प्याला मैं मनोहर मदिरापान मानता हूँ।।८।।

हे प्रिये ! तेरे पैर की समता प्राप्त कर कमल को समुन्नत शोभा सम्पत्ति वाला मानता हूँ ।।९।।

विधाता के दिव्य निर्माण कौशल की समीक्षा कर मैं तेरे शरीर को निर्माण कला का उत्कर्ष मानता हूँ ।।१०।।

हे प्रिये ! तेरी सौन्दर्य-सम्पत्ति के वर्णन में मैं अपने शब्द की न्यूनता मानता हूँ ।।११।।

ooooo

(५१)

स्वागतं तनुते प्रियस्य रवेरियं प्राची ।
प्रभाते लभते मुदाऽरुणितश्रियं प्राची ।।२।।
प्रोषिते दयिते विरहिणी सुप्रियेव ।
नैशतमसावृता धत्ते न श्रियं प्राची ।।३।।
दिग्भ्रमाकुलिताय विजने वनोद्देशे ।
प्रायशो विदधाति सम्यग् दिग्धियं प्राची ।।४।।
विश्वजनकल्याणकृतसौम्या पुराणी ।
संस्कृति बहुविश्रुता भवतादियं प्राची ।।५।।
पद्धतिं वैदेशिकीमनुकुर्वते ये ।
रीतिरेभ्यो रोचतां साक्षादियं प्राची ।।६।।
पूर्वमुदयं भानुमानिह याति नित्यम् ।
सर्वजनवन्द्या प्रिया तस्मादियं प्राची ।।७।।
शोभते प्रियमण्डना सिन्दूररम्या ।
सुप्रियेव प्रभाते तस्मादियं प्राची ।।८।।

भावार्थ - यह पूरब दिशा अपने प्रियतम सूरज का स्वागत कर रही है। अतएव प्रातःकाल खुशी से लालशोभा को धारण करती है।।१।।

प्रियतम के दूर रहने पर वियोगिनी अच्छी प्रियतमा की तरह रात के अन्धकार से ढकी हुई यह प्राची शोभा को धारण नहीं कर पा रही थी ।।२।।

यह प्राची (पूरब दिशा) दिग्भ्रम से परेशान आदमी को निर्जन जंगली क्षेत्र में प्रायः सही दिशा का ज्ञान कराती है ।।३।।

यह पूर्व की संस्कृति या सभ्यता सबलोगों के कल्याण करने वाली सुन्दर और प्राचीन है। यह संस्कृति अत्यन्त विख्यात होवे ।।४।।

विदेशी पद्धति का जो अनुकरण करते हैं, उन्हें यह पूर्व की संस्कृति साक्षात् अच्छी लगे ।।५।।

यहाँ सूरज सर्वदा सबसे पहले उगता है। अतएव यह पूरब दिशा सबलोगों के द्वारा प्रिय वन्दनीय है ।।६।।

अतएव शृङ्गारप्रिय सिन्दूर से शोभित सुन्दर नायिका की भाँति प्रातःकाल यह प्राची लगती है ।।७।।

ooooo

(५२)

स्वजन्मनैव दुःखदा कन्या ।
प्रियाऽभिनन्दिता कदा कन्या ? ।।१।।
इति श्रुतं गुरोः पितुर्मातुः ।
हृदो विदारिका सदा कन्या ।।२।।
यदोपसर्पतीह तारुण्यम् ।
मुधा कलङ्कभीतिदा कन्या ।।३।।
जरातुरस्य चार्भकस्यापि ।
प्रकल्पते हिताय सा कन्या ।।४।।
बहूनि कुर्वती समं मात्रा ।
नयेन्निशामनिद्रया कन्या ।।५।।
बहिर्गतिः समीक्ष्यते तस्याः ।
कथं भवेत्सुशिक्षिता कन्या ।।६।।
परं धनं बुधा इमामाहुः ।
निपीड्यते धनाय सा कन्या ।।७।।

मुदोपयम्यते समाजेऽस्मिन् ।
समुद्रयाऽतिसम्पदा कन्या ।।८।।
पुरादिशक्तिरर्चिता याऽभूत् ।
निपीड्य दह्यतेऽद्य सा कन्या ।।९।।
वरोऽस्तु कज्जलाचलस्पर्धी ।
तदर्थ इन्दुवत्सिता कन्या ।।१०।।

भावार्थ – अपने जन्म से ही लड़की दुःख दायिनी होती है। (हृदय से) प्रिय और स्वागत योग्य लड़की कब होती? ।।१।।

गुरु, पिता और माता से यह सुना है कि लड़की हमेशा हृदय विदारिका होती है ।।२।।

जब युवावस्था नज़दीक आती है, तब वह बेकार का कलंक और भय देने वाली हो जाती है ।।३।।

बुढ़ापा से परेशान और शिशु को भी मदद के लिए लड़की बहुत तैयार रहती है ।।४।।

माँ के साथ (घर के) बहुत काम करती हुई लड़की रात नींद के बिना बिताती है ।।५।।

उसके बाहर जाने की टीका टिप्पणी होती है (ऐसे में) लड़की कैसे सुशिक्षित होवे ।।६।।

लड़की को विद्वान लोग पराया धन कहते हैं। (किन्तु इस समय) धन के लिए सताई जाती है ।।७।।

इस समाज में खुशी से लड़की ब्याही जाती है, किन्तु बहुत अधिक दहेज में रुपये तथा दूसरे प्रकार की सम्पत्ति से शादी की जा सकती है ।।८।।

पहले आदिशक्ति कहकर जो लड़की पूजित होती थी, वही लड़की आजकल सताई और जलाई जाती है।।९।।

दुल्हा भले ही काले पर्वत के समान हो, उसके लिए भी चाँद की तरह उजली लड़की चाहिए ।।१०।।

ooooo

(५३)

गीयतां राष्ट्रियं 'वन्दे मारतम्' ।
गीतमत्यद्भुतं 'वन्दे मारतम्' ॥१॥
वैदिकं लौकिकं वत साहित्यिकम् ।
गीतमस्मत्प्रियं 'वन्दे मारतम्' ॥२॥
जातिवर्जितवर्णधर्मविवर्जितम् ।
गीतमुन्नतरसं 'वन्दे मारतम्' ॥३॥
मेदिनीकीर्त्तनं सर्वजनप्रियम् ।
गीतमभिनवलयं 'वन्दे मारतम्' ॥४॥
ग्राम्यमथ नागरं चारण्यं शुभम् ।
गीतमन्तःस्वरं 'वन्दे मारतम्' ॥५॥
मन्दिरं मस्जिदं तैरस्त्रीकृतम् ।
गीतमतिसुन्दरं 'वन्दे मारतम्' ॥६॥
वर्त्तमानं भूतमथ भावि प्रियम् ।
गीतमतिशाश्वतं 'वन्दे मारतम्' ॥७॥

भावार्थ - 'वन्दे मातरम्' यह राष्ट्रिय गीत गावें । यह गीत 'वन्दे मातरम्' अत्यन्त विस्मयकारी है ॥१॥

यह 'वन्दे मातरम्' गीत वैदिक है, लौकिक है और साहित्यिक भी है यह गीत हमारा प्रिय है ॥२॥

यह गीत जाति, धर्म तथा वर्ण से वर्जित है, इस 'वन्दे मातरम्' गीत का रस अतिशय समुन्नत है ॥३॥

धरती की वन्दना तथा सबलोगों का प्रिय 'वन्दे मातरम्' गीत का सु अभिनव है ॥४॥

यह ग्रामीण भी है शहर का भी तथा जंगल का भी है। यह गीत 'वन्दे मातरम्' अन्तःकरण के स्वर से समन्वित है ॥५॥

उनलोगों के द्वारा मन्दिर और मस्ज़िद सब धार्मिक स्थल अस्त्र बन

लिया गया। यह 'वन्दे मातरम्' गीत अत्यन्त सुन्दर है।।६।।

यह 'वन्दे मातरम्' गीत वर्तमान कालिक है भूत कालिक है तथा आने वाले समय के लिए भी प्रिय है। यह अत्यन्त शाश्वत गीत है ।।७।।

ooooo

(५४)

राजनेतॄणां विवादोऽद्योतिहासं बाधते ।
बहूनां विद्यार्थिनां बुद्धेर्विकासं बाधते ।।१।।
लम्पटानां कामुकानां दुर्विनीतं मानसम् ।
शोभमानं कामिनीनां भ्रूविलासं बाधते ।।२।।
विप्लवातङ्कप्रचारैर्मातृभूमेर्दुर्दशा ।
निश्छलं रम्यं शिशूनां मन्दहासं बाधते ।।३।।
स्वच्छसङ्कल्पोऽस्मदीयो हन्तु देशद्रोहिणः ।
अमोघो रामेषुरेवं चन्द्रहासं बाधते ।।४।।
जीवनं दैन्यार्दितं प्रतिभावतोऽपीत्थं यथा ।
दुर्दिनध्वान्तं ततं भानुप्रकाशं बाधते ।।५।।
दुराचारप्रचारोऽयं सदाचारं साम्प्रतम् ।
हिमाद्रौ वातो यथा तं पौषमासं बाधते ।।६।।
स्वामिनो महतोऽधुनापि क्रूरमत्यनुशासनम् ।
शोषितोद्धारव्रतस्याग्रेऽपि दासं बाधते ।।७।।
आपणे मूल्यं महद्व्यवहारवस्तूनां सखे ।
उत्सवेष्वपि निर्धनानां समुल्लासं बाधते ।।८।।
हर्म्यनिर्माणं समृद्धानां विशालं सर्वतः ।
प्रत्यहं श्रमजीविनां तुच्छं निवासं बाधते ।।९।।
खलानां स्वीयाभिलाषावाप्तये बहुवञ्चनम् ।
सर्वसुखदं सज्जनानां सत्प्रयासं बाधते ।।१०।।
नागरोद्यानेषु यूनां सङ्गमः सद्योऽधुना ।
विश्रुतं वृन्दावने मुग्धालिरासं बाधते ।।११।।

भावार्थ - राजनेताओं का विवाद आज इतिहास को बाधित कर रहा है। अने छात्रों की बुद्धि के विकास को रोक रहा है ।।१।।

लम्पट और कामुक लोगों का उद्दण्ड मन सुन्दर प्रमदाओं के कटाक्षा विलासिता को बाधित कर रहा है।।२।।

द्रोह, आतंक के बाहुल्य से मातृभूमि की दुर्दशा हो रही है, जो छलरहि सुन्दर शिशुओं के मन्द मुस्कान को रोक रही है।।३।।

हमारा ईमानदार संकल्प देशद्रोहियों को निर्मूल करे। जैसे अमोघ राम क बाण रावण के तलवार (चन्द्रहास) को रोक पाता है।।४।।

प्रतिभावान् विद्वानों का जीवन गरीबी से इस प्रकार पीड़ित है, जै बरसात के दिन भी अन्धेरे से व्याप्त होकर सूर्य के प्रकाश को रोक देता है।।५

चारों ओर दुराचार का यह प्रचार इस समय सदाचार को इसी तरह बाधि कर रहा है, जैसे बर्फीली हवा उस पूस के महीने को बाधित कर देती है ।।६

इस समय भी बड़े मालिकों का अनुशासन अत्यन्त निष्ठुर है, शोषित दलितों के उद्धार का संकल्प रखने वाले के आगे भी दास या भृत्य को परेश किया जाता है ।।७।।

हे मित्र ! बाज़ार में व्यवहारोपयोगी वस्तुओं की कीमत बहुत अधिक जो पर्व-त्योहार में भी गरीबों के उल्लास या खुशी को बाधित कर रहा है ।।८

सब ओर सम्पन्न धनी लोगों के महलों का निर्माण कार्य बहुत बड़ा जो प्रतिदिन मज़दूर की झोंपड़ी को बाधित कर रहा है ।।९।।

अपनी अभिलाषा की पूर्ति के लिए दुष्टों के अनेक प्रकार का छल हो है। जो सर्वजनहितकारी सज्जनों के अच्छे प्रयास को रोक देता है ।।१०।।

शहर के उद्यानों (पार्कों में) में आजकल सीधे युवक-युवतियों का संग विख्यात वृन्दावन में गोपियों की रासलीला को पछाड़ रहा है ।।११।।

ooooo

(५५)

दम्पतिस्वीकृतमनन्यं शासनम् ।
बहुविटपसङ्कुलं वन्यं शासनम् ।।१।।
कोकिलाकूजितं हृद्यं स्यान्न वा ।
काककोलाहलैर्धन्यं शासनम् ।।२।।
जलौघैः परिद्रूयमानं सर्वतः ।
मनुजवृन्दं किं शरण्यं शासनम् ? ।।३।।
दीनतामपनयतु जनताया इदम् ।
न वा व्यर्थं प्रजाजन्यं शासनम् ।।४।।
लुण्ठनं छलनं समन्तान्मारणम् ।
कुकृत्यं सहते जघन्यं शासनम् ।।५।।
मुद्रयाऽखिलदुर्लभं सुलभं सखे ।
यथेच्छं क्रीणाहि पण्यं शासनम् ।।६।।
बलेनाऽऽयत्तीकृतं बलिनाऽधुना ।
विरूपं सर्वथाऽऽरण्यं शासनम् ।।७।।

भावार्थ – पति-पत्नी के द्वारा अपनाया गया शासन अलग तरह का है, जो बहुत से धूर्त्तों से भरा जंगली शासन ही है। (विटप का अर्थ धूर्त्त भी, और वृक्ष भी, जंगल वृक्षों से भरा होता, यह शासन धूर्त्तों से भरा है) ।।१।।

कोयल की कूक मनोहर हो या न हो, यह शासन कौओं के कोलाहल से धन्य है ।।२।।

बाढ़ों से सब ओर जनता दुःखी और परेशान है। क्या यह शासन उसका सहारा हो पाता है ? ।।३।।

जनता की गरीबी यह दूर करे, अन्यथा यह प्रजातन्त्र का शासन बेकार है ।।४।।

सब ओर लूट, ठगी, हत्या है यह शासन जघन्य कुकृत्य सह लेता है। अर्थात् उसे रोकने का उपाय नहीं कर पाता है ।।५।।

हे मित्र ! पैसे से दुर्लभ वस्तु भी आजकल सुलभ हो जाता, बिकने योग्य इस शासन को अपनी इच्छा के अनुसार खरीद लो ।।६।।

इस समय बलवान् व्यक्ति के द्वारा बलपूर्वक हथिया लिया गया यह शासन सर्वथा बिगड़ा हुआ जंगली शासन बना हुआ है ।।७।।

ooooo

(५६)

मन्दमन्दं तत्प्रयाणं रोचते ।
कलालापं ग़ज़लगानं रोचते ।।१।।
फुल्लमिव सरसीरुहं बालस्मितम् ।
वीक्षितुं सर्वस्वदानं रोचते ।।२।।
कलरवाकुलितं मुदा क्रीडाङ्गनम्।
समं शिशुभिः तत्र यानं रोचते ।।३।।
प्रतिग्रामं चात्र विद्यामन्दिरम् ।
बालिकाभिः शोभमानं रोचते ।।४।।
परस्परसञ्जातकलहानां सदा ।
समाजे सुचि समाधानं रोचते ।।५।।
भूतमतिगौरवान्वितमथवाऽस्तु नो ।
जीवनं शुचि वर्त्तमानं रोचते ।।६।।
शस्यसम्पन्नां विधातुं मेदिनीम् ।
वारिदानां वारिदानं रोचते ।।७।।
विनेयानां प्रत्यहं स्वाध्यायगम् ।
बालकानां बकध्यानं रोचते ।।८।।

भावार्थ - धीरे-धीरे उसकी (नायिका की) गति अच्छी लगती है। मधुर स्वर में ग़ज़ल का गाना अच्छा लगता है।।१।।

खिले हुए कमल के वन की तरह बच्चे की मुस्कान मनोहर होती है, उसे देखने के लिए सर्वस्व का दान कर देना अच्छा लगता है ।।२।।

खेल का मैदान खुशी कोलाहल भरा हो, तो वहाँ बच्चों के साथ जाना अच्छा लगता है ।।३।।

प्रत्येक गाँव में यहाँ विद्यालय लड़कियों से सुशोभित होने पर अच्छा लगता है ।।४।।

परस्पर उत्पन्न झगड़ों का समाज में सुन्दर समाधान अच्छा लगता है ।।५।।

अतीत अत्यन्त गौरवान्वित हो या न हो किन्तु वर्तमान जीवन पवित्र और सुन्दर अच्छा लगता है ।।६।।

धरती को फसल से परिपूर्ण बनाने के लिए मेघों का बरसना अच्छा लगता है ।।७।।

विनम्र छात्रों का प्रतिदिन अपने अध्ययन में बक ध्यान (बगुले की तरह सब कुछ भूल कर विद्याध्ययन में लगा होना) अच्छा लगता है ।।८।।

ooooo

(५७)

कूजति कोकिलकुलं रसाले ।
भाति फलं मञ्जुलं रसाले ।।१।।
शाखा फलभरविनता तत्र हि ।
पत्रं मधुसङ्कुलं रसाले ।।२।।
स्कन्धालम्बितहिन्दोलेन च ।
क्रीडति बहु वटुकुलं रसाले ।।३।।
कोकिलकलरुतमनुगुञ्जितमथ ।
सामगानसमतुलं रसाले ।।४।।
उन्मदमदनवती स्वनतीव ।
वल्लभाय च विपुलं रसाले ।।५।।
वासन्ती सुषमा वनवीथिषु ।
चित्तं हरति बहुलं रसाले ।।६।।

मन्मथमर्चयति प्रमदाकुल-

मद्य सखेऽतिमृदुलं रसाले ।।७।।

भावार्थ - कोयलों का समूह आम के पेड़ पर कूज रहा है। सुन्दर फल आम के पेड़ पर शोभ रहा है ।।१।।

उस आम के पेड़ पर फलों के अतिशय भार से डाल झुकी है, तथा पत्ता मधुर रस से भरा है ।।२।।

आम के पेड़ पर बहुत बच्चों का समूह मोटी डाल से लटकाए झूले से खेल रहा है ।।३।।

कोयल की मधुर धुन साम गान के समान होकर आम के पेड़ पर अनुगुञ्जित हो रहा है ।।४।।

उन्मत्त कामयुक्त नायिका मानो प्रियतम के लिए अतिशय मन ही मन आम्र-कुञ्ज में गुनगुना रही है ।।५।।

वन उपवन आदि में वसन्त ऋतु की शोभा है, वही अतिशय शोभा आम के पेड़ पर मन को बहुत लुभा रही है ।।६।।

हे मित्र ! आम्र-कुञ्ज में आज युवतियों का समूह अत्यन्त ही कोमलता के साथ कामदेव की अर्चना कर रहा है ।।७।।

ooooo

(५८)

अयमुपसर्पति झञ्झावातः ।

भुवमभिसिञ्चति झञ्झावातः ।।१।।

शुचितपदारितकृषिभूपटलम् ।

वीक्ष्य विकुप्यति झञ्झावातः ।।२।।

सरिदबला प्रमदेव वियुक्ता

इति बहु वर्षति झञ्झावातः ।।३।।

कल्मषमलिनवीथिपथजातम् ।

विमलं रचयति झञ्झावातः ॥४॥
व्रततिविहीनवनद्रुममशिवम् ।
शिवमिव विनयति झञ्झावातः ॥५॥
बहुविधवाहनवान्तविदूषित-
विषमिति गर्जति झञ्झावातः ॥६॥
गिरिवरगह्वरवनगहने पथि ।
अभयं विहरति झञ्झावातः ॥७॥
खलदलमिव दुर्जनमथ सुजनम् ।
कमपि न मुञ्चति झञ्झावातः ॥८॥
प्रबलशाखतरुवरमपि बुधमिव
अधः पातयति झञ्झावातः ॥९॥
खगकुलमाकुलमशरणमभितः ।
तदपि न विरमति झञ्झावातः ॥१०॥
किमु कुपितः कुलिशं मघवेव ।
शैले प्रहरति झञ्झावातः ॥११॥
आणवमस्त्रमराविव समदः ।
कोऽपि विमञ्चति झञ्झावातः ॥१२॥
वाधितजनजीवनं हि दलमिव ।
दिनं विरचयति झञ्झावातः ॥१३॥
रविकरतापमसह्यमनल्पम् ।
सहसा शमयति झञ्झावातः ॥१४॥
युवजनदम्पतिसङ्गम सुखमपि ।
अलं प्रयच्छति झञ्झावातः ॥१५॥

भावार्थ - यह झंझावात समीप आ रहा है। यह झंझावात धरती को सींच रहा है ॥१॥

ग्रीष्म के ताप से फाड़ी गई कृषि की जमीन की सतह को देखकर यह

झंझावात अति क्रुद्ध हो रहा है।।२।।

वियोगिनी प्रमदा नारी की भाँति नदी हो गई है। इसीलिए (नायक रूप) यह झंझावात अत्यन्त बरस रहा है।।३।।

गंदगी से मलिन गली सड़क आदि को यह झंझावात स्वच्छ कर देता है ।।४।।

लताओं से विहीन वनवृक्ष शोभाहीन हो गया है, उसे यह झंझावात शोभायुक्त कर देता है ।।५।।

अनेक प्रकार के वाहन से छोड़े गये विदूषित विष फैल रहा है इसीलिए यह झंझावात गर्जन करता है । (प्रकृति पर किया गया अत्याचार को नहीं सहन करता है)।।६।।

विशाल पर्वत की गुफाओं, गहन वन के रास्ते भी यह झंझावात निर्भय होकर विहार करता है ।।६।।

दुष्ट दुश्मन के दल की भाँति दुर्जन तथा सुजन किसी को भी यह झंझावात नहीं छोड़ता ।।८।।

बड़ी विशाल शाखाओं वाले तरुवर को भी पण्डित की भाँति यह झंझावात नीचे गिरा देता है ।।६।।

(जैसे कोई चपल दुराचारी अपनी चपलता से पण्डितों को भी पथभ्रष्ट कर देता है, उसी प्रकार यह झंझावात मोटी डाल वाली वृक्ष को भी गिरा देता है।)

चिड़ियों का समूह व्याकुल होकर आश्रयहीन हो गया फिर भी यह झंझावात नहीं रुकता ।।१०।।

क्या क्रुद्ध देवराज इन्द्र की भाँति यह झंझावात पहाड़ पर वज्र प्रहार कर रहा है ? ।।११।।

जैसे कोई घमण्डी (शासक आदि) शत्रु देश पर अणुबम छोड़ता हो उसी तरह यह झंझावात भी प्रलय मचा रहा है।।१२।।

जिस तरह कोई राजनीतिक दल बन्द का आह्वान करके जनजीवन को बाधित कर देता है उसी तरह यह झंझावात पूरे दिन को बाधित कर देता है ।।१३।।

सूर्य की किरण के अतिशय असह्य ताप को यह झंझावात सहसा शान्त कर देता है ।।१४।।

तरुणजन दम्पत्ति के संगम सुख हेतु यह झंझावात पूर्ण अवसर देता है ।।१५।।

ooooo

(५६)

जनमानसमभिभवति मनोजः ।
अबलाजनमतितुदति मनोजः ।।१।।
दैहिकबलविजितं बहु विदितम् ।
सकलमनङ्गो जयति मनोजः ।।२।।
क्वचिदाणवमायुधमपि मोघम् ।
कुसुमशरैरिह जयति मनोजः ।।३।।
रतिरतिविलपति कामदहनमनु ।
भस्मितनुरुत हसति मनोजः ।।४।।
मनसिजात इति वेत्ति जगत्किल ।
मथ्नन्मन आचरति मनोजः ।।५।।
युवजनमन आमथितमस्तु ननु ।
जरतां हृदमपि दहति मनोजः ।।६।।
श्रुतमृतुपतिरिदमीयमित्रमिति ।
किमु वर्षास्वपि लसति मनोजः ।।७।।
सङ्गिन एवमनङ्गहता ननु ।
यतिमपि किं वत विशति मनोजः ।।८।।
वामा कामहता प्रियमिच्छतु ।
तमपि विवेकं त्यजति मनोजः ।।६।।
हरनयनानलदग्धतनुः किमु ।
अनलशिखामिह वहति मनोजः ।।१०।।
तर्पणमस्य न वेत्ति न गम्यम् ।

देव पदं परिहरति मनोजः ।।११।।

सौन्दर्योपमितौ कविकल्पित-

मुपमानत्वं भजति मनोजः ।।१२।।

वशमानेतुं कामयमानम् ।

वशीकृत्य पातयति मनोजः ।।१३।।

शिवमपि साधारणमिव पश्यन् ।

स्मृतिविषयोऽयं भवति मनोजः ।।१४।।

परिभवममितपराक्रमशालिषु ।

कृतमनिशं संस्मरति मनोजः ।।१५।।

भावार्थ - कामदेव आदमी के मन को प्रभावित करता है या जीत लेता है। नारीजन के जन को यह अत्यन्त परेशान करता है।।१।।

शारीरिक बल से बहुत कुछ जीत लिया जाता है यह तो प्रसिद्ध है, किन्तु यह कामदेव अंगरहित होकर भी सबों को जीत लेता है।।२।।

कहीं आणविक अस्त्र भी विफल हो जाता है, किन्तु यहाँ कामदेव फूल के बाणों से ही जीत लेता है ।।३।।

काम दहन के बाद रति (कामपत्नी) अत्यन्त विलाप करती है, किन्तु उधर भस्मीभूत शरीर वाला कामदेव हँसता है ।।४।।

मन में उत्पन्न हुआ है (यह कामदेव) यह संसार जानता है किन्तु यह कामदेव उसी मन को मथ देता है (पीड़ित) करता रहता है ।।५।।

तरुण जन के मन (इस कामदेव से) पीड़ित हो यह बात सही है। किन्तु यह कामदेव वृद्धों के हृदय को भी जलाता है ।।६।।

इस कामदेव का मित्र ऋतुराज वसन्त है (अतः वसन्त में ही इसे अधिक प्रभावित होना चाहिये) फिर वर्षाऋतु में भी यह कामदेव क्यों प्रभावित होता दिखता है?।।७।।

गृहस्थ आदि संगी जन ही इस तरह कामदेव से आहत होवें किन्तु यति या संन्यासी में भी यह क्यों प्रवेश कर जाता है ।।८।।

काम से पीड़ित होकर नारी प्रियतम को चाहे, किन्तु इस विवेक या भेद

को भी कामदेव छोड़ देता है (अर्थात् आजकल नारी नारी के साथ भी पुरुष पुरुष के साथ भी काम क्रीड़ा में देखे जाते हैं) ।।९।।

शिवजी के नेत्राग्नि से जला हुआ शरीर वाला यह कामदेव क्या यहाँ अग्निशिखा को धारण कर रहा है।।१०।।

यह कामदेव की तृप्ति गम्य अगम्य कुछ भी नहीं समझता है (कहाँ काम की तृप्ति होनी चाहिये कहाँ नहीं होनी चाहिये यह विचार नहीं करता है) इसलिए यह कामदेव देव पद को भी छोड़ देता है ।।११।।

सौन्दर्य की उपमा में कवि कल्पित उपमान का पद यह कामदेव धारण करता है। अर्थात् कवि लोग अपने नायक को कामदेव के समान सुन्दर वर्णन करते हैं ।।१२।।

जो कोई भी इस कामदेव को अपने वश में करना चाहता है उसे अपने वश में करके यह गिरा देता है।।१३।।

शिवजी को भी साधारण जन की तरह देखता हुआ अर्थात् उन्हें भी अपने वश में करने की चेष्टा करता हुआ यह कामदेव स्मृति विषय बनकर रह गया। अर्थात् उसे अपने शरीर से हाथ धोना पड़ा ।।१४।।

अत्यन्त पराक्रमशाली व्यक्तियों में किये हुए अनादर को यह कामदेव सदा याद रखता रहेगा ।।१५।।

ooooo

(६०)

प्रियं वियोगिनी सुतृष्णया प्रतीक्षते ।
प्रतिक्षणं तदागमाशया प्रतीक्षते ।।१।।
मधौ मधुव्रतानुगुञ्जमानिशम्य सा ।
निमील्य चक्षुषी हताशया प्रतीक्षते ।।२।।
वनेषु कोकिलारवेण दीप्तमन्मथा ।
रहस्यसौ ह्यसह्यपीडया प्रतीक्षते ।।३।।
हिमांशुरश्मिरप्यलं निदाघकारणम् ।

निशासु शून्यमन्दिरेभिया प्रतीक्षते ॥४॥
विहाय बन्धुबान्धवान् गुरून् सखीरपि
असङ्गमेत्य लोकलज्जया प्रतीक्षते ॥५॥
कदाचिदुन्मदा कदाचिदन्यमानसा ।
प्रियं विचिन्त्य सा सविस्मया प्रतीक्षते ॥६॥
कथञ्चिदह्नि कालयापनं करोति सा ।
नयन्त्यसौ निशामनिद्रया प्रतीक्षते ॥७॥
वसन्तवातकम्पिता लताऽपि चञ्चला ।
समं वियोगवाधया तया प्रतीक्षते ॥८॥
स्वपीतपत्रपातनच्छलेन पादपः ।
निजाश्रु पातयत्समं तया प्रतीक्षते ॥९॥
कलावतः कलेव कृष्णपक्षवर्तिनी ।
क्षयं व्रजन्त्यसौ गतश्रिया प्रतीक्षते ॥१०॥
अमास्तु पूर्णिमाऽथ पञ्चमी त्रयोदशी ।
व्रतं विनापि सा बुभुक्षया प्रतीक्षते ॥११॥
प्रचण्डतापपीडिताप्यनङ्गतापिता ।
सुशीतले जले पिपासया प्रतीक्षते ॥१२॥
व्यनक्ति नो मनोरथं प्रियेण सङ्गमम् ।
मनस्यसौ विरोदिति ह्रिया प्रतीक्षते ॥१३॥
क्षणेन तल्पमभ्युपैति खिन्नमानसा ।
क्षणं गवाक्षमेत्य सा प्रिया प्रतीक्षते ॥१४॥
रहस्यधीरतामुपेत्य भग्नमानसा ।
क्षणे क्षणे निजाश्रुधरया प्रतीक्षते ॥१५॥
सखीसमन्विता कथञ्चिदाप्त धीरता ।
पुनः क्षणेन सैव मूर्च्छया प्रतीक्षते ॥१६॥
रहस्तदीयचित्रमालिखन्त्यसौ मुहुः ।
परामृशत्यहोऽभ्यसूयया प्रतीक्षते ॥१७॥

अनङ्गभाविता प्रियङ्गतेव कामिनी ।
मुधा तदीयसङ्गमेच्छया प्रतीक्षते ।।१८।।
श्वसित्यहोऽधुनापि ते समागमाशया ।
प्रिय ! त्वदीयमानिनी धिया प्रतीक्षते ।।१६।।
विलम्बमद्य नैव तामुपैहि सत्वरम् ।
तवागमेन जीविताशया प्रतीक्षते ।।२०।।
उदग्रमाहितव्रतं प्रियाकुचद्वयम् ।
कृताभिषेकमश्रुधारया प्रतीक्षते ।।२१।।
अहर्निशं प्रजागरेण रोदनादिना ।
प्रियामुखं स्वपाण्डुराभया प्रतीक्षते ।।२२।।
निसर्गसौम्यमेतदाननं कचाचितम् ।
यथेन्दुधाम मेघमालया प्रतीक्षते ।।२३।।
इतस्ततो भ्रमन्त्यनुक्षणं स्वमन्दिरे ।
निशासु सा हि शून्यशय्यया प्रतीक्षते ।।२४।।
प्रियस्य तत्स्मरत्पतिप्रबोधनम् प्रियं
तदीयजीवितं प्रियाशया प्रतीक्षते ।।२५।।

भावार्थ - वियोगिनी नायिका मीठी प्यास से प्रियतम की प्रतीक्षा कर रही है। हर पल उसके आने की आशा से प्रतीक्षा कर रही है ।।१।।

मधुमास में भ्रमर के अनुगुञ्ज को सुनकर वह दोनों आँखें बन्द कर हताश होकर प्रतीक्षा कर रही है ।।२।।

वन-उपवन में कोयल की कूक से उसका काम उद्दीप्त हो जाता है इसलिए वह एकान्त में असह्य पीड़ा के साथ (प्रियतम) की प्रतीक्षा कर रही है ।।३।।

चन्द्र किरण भी उसके लिए अतिशय ताप का कारण हैं रातों को सूने प्रकोष्ठ में भय के साथ प्रतीक्षा कर रही है ।।४।।

अपने बन्धु-बान्धव गुरुजन तथा सखियों को भी छोड़कर अकेली लोकलाज से प्रतीक्षा कर रही है ।।५।।

कभी पागल की तरह तो कभी अन्यमनस्क होकर अपने प्रियतम को सोचकर वह विस्मय के साथ प्रतीक्षा करती है ।।६।।

दिन में तो किसी तरह वह समय बिता लेती है किन्तु बिना सोई वह रात बिताती हुई प्रतीक्षा करती है।।७।।

विरहदुःख से पीड़ित उस के साथ वसन्त की हवा से कम्पित चञ्चल लता भी प्रतीक्षा करती है ।।८।।

अपने पीले पत्ते को गिराने के बहाने वृक्ष अपने आँसू गिराता हुआ उसके साथ प्रतीक्षा करता है ।।९।।

कृष्ण पक्ष में रहने वाली चन्द्र-कला की भाँति श्रीविहीन होकर वह क्षीण होती हुई प्रतीक्षा करती है।।१०।।

अमावस्या हो या पूर्णिमा हो अथवा पञ्चमी या त्रयोदशी हो, व्रत के बिना भी वह भूखी रहकर प्रतीक्षा करती है ।।११।।

विरहाग्नि रूप प्रचण्ड ताप से पीड़ित तथा कामदेव से परेशान वह ठंढेजल में (भी) प्यासी रहकर प्रतीक्षा करती है ।।१२।।

प्रियतम के साथ संगम रूप अपने मनोरथ को प्रकट नहीं कर पाती, वह (नायिका) लाज के कारण मन ही मन रोती है और प्रतीक्षा करती है ।।१३।।

दुःखी मन वाली वह प्रिया पल भर में बिछावन पर आ जाती है पुनः एक पल बाद ही खिड़की पर प्रतीक्षा करती है ।।१४।।

एकान्त में अधीर होकर टूटे मन वाली वह पल-पल में अपने अश्रु की धारा से प्रतीक्षा करती है ।।१५।।

सखियों के बीच किसी तरह धैर्य धारण कर वही (नायिका) फिर पल भर में मूर्च्छा से प्रतीक्षा करती है । अर्थात् मूर्च्छित होकर प्रतीक्षा करती है ।।१६।।

एकान्त में उस (नायक) का चित्र बार-बार बनाकर वह मिटाती है। आह ! वह नायिका जलन के साथ प्रतीक्षा करती है ।।१७।।

कामदेव से प्रभावित होकर वह कामिनी 'नायक को पा लिया हो' ऐसा मानकर व्यर्थ में उसके संगम की इच्छा से प्रतीक्षा करती है ।।१८।।

हे प्रिय ! इस समय भी वह तेरे समागम की आशा से साँस ले रही है

अर्थात् जीवित है। तेरी प्रियतमा संगम की इच्छा से प्रतीक्षा कर रही है ।।१६।।

अब कोई देरी नहीं, शीघ्र उस (प्रिया) के पास जाओ । तेरे पहुँचते ही उसे जीवित रहने की आशा है, ऐसी ही वह प्रतीक्षा करती है ।।२०।।

उठे हुए अग्रभाग वाले व्रतधारण किये हुए (नायकेतर के स्पर्शादि दोष से वर्जित) प्रिया के दोनों स्तन अश्रुधारा से नहाए हुए प्रतीक्षा करते हैं ।।२१।।

दिन-रात जागरण से तथा रोने धोने से प्रिया का मुख अपनी पीली कान्ति के द्वारा प्रतीक्षा करती है।।२२।।

स्वभाव से सुन्दर तथा केश से व्याप्त उस (प्रिया) का मुख मेघमाला से चन्द्र कान्ति की भाँति हो कर प्रतीक्षा करती है ।।२३।।

अपने प्रकोष्ठ में हर पल इधर उधर भटकती हुई रातों को वह खाली बिछावन से प्रतीक्षा करती है ।।२४।।

(दूर जाते समय) नायक का वह प्रिय आश्वासन को याद करती है उसका जीवन प्रिय के आगमन की आशा से प्रतीक्षा कर रही है ।।२५।।

ooooo

(६१)

चिरसञ्चितमभिलाषमपि त्वम् ।
वदसि न किं प्रियमाप्तमपि त्वम् ।।१।।
गता निशा प्रियरहिता रिक्ता ।
मुधा नयसि निशमद्यापि त्वम् ।।२।।
कामिनमनुकूलं प्रियमनघम् ।
वीक्ष्य जहासि न मानमपि त्वम् ।।३।।
प्रिये ! सघनजघनं पिहितं तव ।
अपिधत्से कुचकलशमपि त्वम् ।।४।।
प्रियसविधे बहुकामविलासम् ।
स्मरसि न किं सखि ! सरसापि त्वम् ।।५।।
रति सुखविघ्नकरीं ह्रियमेताम् ।
मुञ्चसि नोन्मदमदनापि त्वम् ।।६।।
अधरामृतलोलुपदयितं ननु ।

दयसे किं न पिपासुमपि त्वम् ।।७।।

कामकलाकुशलाय समर्पय ।

प्रियपतये सर्वस्वमपि त्वम् ।।८।।

भावार्थ – बहुत दिन संजोई हुई अभिलाषा (मनोरथ) को भी तुम प्रियतम को पाकर भी क्यों नहीं बोलती ।।१।।

प्रियतम से रहित खाली रात बीत चुकी, आज भी तुम रात को बेकार बिता रही हो ।।२।।

कामुक, अनुकूल, पवित्र प्रियतम को देखकर भी मान को नहीं छोड़ रही हो ।।३।।

तेरा मोटा जघन-स्थल तो ढका हुआ है (ही) अपने कुचकलश को भी ढक रही हो ।।४।।

हे सखी ! प्रियतम के अनेक प्रकार का काम-विलास उचित है, रसयुक्त होकर भी इसे क्यों नहीं याद करती।।५।।

यह लज्जा रति सुख में बाधा डालने वाली होती है उन्मत्त काम वाली होकर भी तुम उस लज्जा को नहीं छोड़ती ।।६।।

प्यासे, तेरे अधरामृत के लालची प्रियतम के ऊपर दया क्यों नहीं करती ।।७।।

कामकला में प्रवीण प्रिय पति को अपना सर्वस्व भी अर्पित कर दो ।।८।।

ooooo

(६२)

सितो वा श्यामः स मेघः ।

भुवं सिञ्चति यः स मेघः ।।१।।

स्तनितमुखरो वा घटा वा ।

अर्पयेदम्भः स मेघः ।।२।।

नभो व्याप्तः कोणसक्तः ।

व्रततितरुरक्षः स मेघः ।।३।।

वायुयानो वाम्बुदानः ।

कामिसङ्गमदः स मेघः ॥४॥

सरःसरिदब्धिप्रपूरः ।

चातके कणदः स मेघः ॥५॥

नागरोद्यानं प्रफुल्लम् ।

अवति वन्यं यः स मेघः ॥६॥

धौतहर्म्या वसतिरास्ताम् ।

कृतकुटीधवलः स मेघः ॥७॥

अपटुकरणोऽचेतनो वा ।

पथिकजनदूतः स मेघः ॥८॥

श्यामसम उत कज्जलाभः ।

तरुणतापहरः स मेघः ॥९॥

कामिनीकचकान्तिचौरः ।

हृतविरहदुःखः स मेघः ॥१०॥

त्रिभुवनावनकर्मशीलो ।

गलगरलनीलः स मेघः ॥११॥

शैलजानयनाञ्जनाभः ।

विहितभवसेकः स मेघः ॥१२॥

भावार्थ – मेघ काला हो या उजला हो, जमीन को जो सींचे, वही मेघ मेघ है ॥१॥

गर्जन से मुखर हो अथवा घटा हो, जो जल प्रदान करे वही मेघ है ॥२॥

पूरे आकाश में घिरा हो या आकाश के कोने में सटा हो, जो लता पादप की रक्षा करता है वही मेघ है॥३॥

हवा में उड़ने वाला हो, अथवा जल प्रदान करने वाला हो, प्रिय-प्रिया के संगम सुख प्रदान करने वाला ही मेघ है ॥४॥

(भले ही) सरोवर, नदी तथा समुद्र को भर देने वाला हो, किन्तु जो चातक को पानी की एक बूँद देने वाला है वही मेघ है॥५॥

शहर का उद्यान तो खिला रहता है किन्तु जो जंगली उद्यान की रक्षा करे वही मेघ है ॥६॥

नागरिक आवास तो चमकते हुए महलों वाली होवें। जो कुटीरों को स्वच्छ

बनावे, वही मेघ है ।।७।।

उचित इन्द्रिय से रहित हो अथवा अचेतन हो, किन्तु जो वियोगीजन का दूत बने वही मेघ है ।।८।।

कृष्ण के समान हो अथवा कज्जल की कान्ति वाला हो, जो प्रचण्ड ताप (दुःख या गर्मी) को दूर करे वही मेघ है ।।९।।

कामिनी के केश की कान्ति को चुराने वाला विरह दुःख को दूर करने वाला ही मेघ है ।।१०।।

त्रिभुवन की रक्षा करने वाला (शिव के) कण्ठ के विष के समान नीला ही मेघ है ।।११।।

पार्वती की आँख के काजल की कान्ति वाला संसार को सिंचित करने वाला मेघ है ।।१२।।

ooooo

(६३)

किमेवमीक्षसे स्थितः शाखिन् ।
तनुं वितत्य विस्मितः शाखिन् ।।१।।
फलं त्वदीयमेव भुञ्जानः ।
छिनत्ति ते तनुं स्मितः शाखिन् ।।२।।
अनातपं लभेत यः कोऽपि ।
त्वदीयमूलमागतः शाखिन् ।।३।।
सदा परोपकारशीलोऽसि ।
न तत्र ते हितोऽहितः शाखिन् ।।४।।
स्वनीडमाकलय्य शाखायाम् ।
खगो भवेदचिन्तितः शाखिन् ।।५।।
सुधां ददासि यद् विषं पीत्वा ।
ततोऽसि शम्भुसम्मितः शाखिन् ।।६।।
ददद्धि जीवनं जगद्भ्यस्त्वम् ।
हरिर्यथासि रूपितः शाखिन् ।।७।।

विधिर्जगद्विधानकार्येऽपि ।
भवेद्भवन्तमाश्रितः शाखिन् ॥८॥
त्रिदेवकर्म कुर्वता मौनम् ।
त्वया जनो न शासितः शाखिन् ॥९॥
फलैः सुपल्लवैस्तथा पुष्पैः ।
भवेज्जनो न तर्पितः शाखिन् ॥१०॥
करोत्युपस्करेन्धनादीनि ।
त्वदीयशाखया ततःशाखिन् ॥११॥
कमप्यहो न याचसे चाम्बु ।
भवञ्छुचौ तृषार्दितः शाखिन् ॥१२॥
अनोकसो भवन्तमाश्रित्य ।
नयन्ति जीवनं स्वतः शाखिन् ॥१३॥
अधस्तवैव पादप ! ज्ञानम् ।
मुनिः स गौतमो गतः शाखिन् ॥१४॥
सुशैत्यमातपं सुवृष्टिं च ।
नयेत मूलमास्थितः शाखिन् ॥१५॥
सपत्रमूलमाध्यमेनैव ।
स्वभोज्यमेत्य जीवितः शाखिन् ॥१६॥
तपस्विजीवनं नयन्तं त्वाम् ।
अहं समीक्ष्य विस्मितः शाखिन् ॥१७॥

भावार्थ – हे वृक्ष ! इस तरह खड़ा होकर क्या देखते हो। (अपने) शरीर (शाखा आदि) को फैलाकर आश्चर्य चकित हो क्या देखते हो ॥१॥

हे वृक्ष ! तेरे ही फल को खाता हुआ आदमी मुस्कुराकर तेरे शरीर (डाल आदि) को काटता है ॥२॥

हे वृक्ष ! जो कोई तेरे मूल (जड़) के पास आया वह (तेरी) छाया प्राप्त कर लेता है ॥३॥

हे वृक्ष ! हमेशा दूसरे का उपकार करना तेरा स्वभाव है। उसमें न कोई

हितकारी होता है न अहितकारी। अर्थात् सबका समान भाव से उपकार करते हो ।।४।।

हे वृक्ष ! तेरी डाल पर अपना घोंसला बनाकर पक्षी निश्चिन्त हो जाता है ।।५।।

हे वृक्ष ! स्वयं विष (वातावरण में फैले कार्बन) को पीकर जो तुम (संसार को) अमृत प्रदान करते हो, इसलिए तुम शिव के समान हो ।।६।।

हे वृक्ष ! संसार के लिए जीवन प्रदान करता हुआ तुम मूर्तिमान् विष्णु की तरह हो ।।७।।

हे वृक्ष ! विधाता संसार निर्माण के कार्य में भी आप पर आश्रित होते हैं। अर्थात् वनस्पति आदि के बिना संसार में जीवन की कल्पना नहीं हो सकती ।।८।।

हे वृक्ष ! त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु और शिव) का काम चुपचाप करता हुआ तेरे द्वारा लोग अनुशासित या शिक्षित नहीं हो पाता अर्थात् अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य करके भी मौन धारण करना ही महत्ता है ।।९।।

हे वृक्ष ! (तेरे) फलों से, सुन्दर पल्लवों से, तथा फूलों से आदमी तृप्त नहीं होता ।।१०।।

हे वृक्ष ! इसलिए तेरी शाखा से उपस्कर जलावन आदि करता है। अर्थात् तेरी लकड़ी का उपयोग उपस्कर जलावन आदि के रूप में करता हुआ आदमी तेरा नाश कर रहा है ।।११।।

हे वृक्ष ! ग्रीष्म ऋतु में प्यास से परेशान भी तुम किसी से जल नहीं मांगते हो ।।१२।।

हे वृक्ष ! गृहविहीन लोग आप पर आश्रित होकर अर्थात् आपके समीप आकर जीवन बिताते हैं ।।१३।।

हे पादप ! हे वृक्ष ! तेरे ही नीचे गौतम बुद्ध मुनि ने ज्ञान प्राप्त किया ।।१४।।

हे वृक्ष ! तेरी जड़ में बैठकर आदमी अतिशय ठंढ, धूप, वर्षा बिता लेता है। अर्थात् अपने आपको आदमी इनसे सुरक्षित कर लेता है ।।१५।।

हे वृक्ष ! अपने पत्ते और जड़ के माध्यम से ही अपना भोजन प्राप्त

कर जीवित रहते हो ।।१६।।

हे वृक्ष ! तपस्वी का जीवन बिताते हुए तुझे देखकर मैं चकित हूँ ।।१७।।

ooooo

(६४)

अयमुपसर्पति मृत्युरजेयः ।
न किमपि शोचति मृत्युरजेयः ।।१।।
धनबललसितं बुद्धिविलसितम् ।
कमपि न मुञ्चति मृत्युरजेयः ।।२।।
माता रोदिति जनकः क्रन्दति ।
तदपि न विदलति मृत्युरजेयः ।।३।।
तरुणमर्भकं वापि जरन्तम् ।
समं कवलयति मृत्युरजेयः ।।४।।
बहुविसारिकृतिभरपरिभूतम् ।
समं कवलयति मृत्युरजेयः ।।५।।
निपुणचिकित्सितमचिकित्सितमपि ।
द्वयमुपगच्छति मृत्युरजेयः ।।६।।
आजननात्सकलैरयमुग्रः ।
प्रतीक्षितोऽतति मृत्युरजेयः ।।७।।
कदायमजनि कदान्तं यास्यति ।
नेत्यवगमयति मृत्युरजेयः ।।८।।
परमद इतिपरमहमिह मन्ये ।
परमसत्यमिति मृत्युरजेयः ।।९।।
त्रेताद्वापरकृतकलिवर्त्ती ।
समदो नृत्यति मृत्युरजेयः ।।१०।।
अत्र विकुप्यति तत्र विसर्पति ।
ततोऽपि कर्षति मृत्युरजेयः ।।११।।

युध्यातङ्कं ईतिविपदादिषु ।
चापि न तुष्यति मृत्युरजेयः ।।१२।।
कारणगणमाश्रितः शठोऽयम् ।
हठादाव्रजति मृत्युरजेयः ।।१३।।
स्वीयरहस्यमनेकचिन्तितम् ।
नैव वेदयति मृत्युरजेयः ।।१४।।

भावार्थ – यह अजेय (नहीं जीतने योग्य) मृत्यु समीप आ रही है। अजेय मृत्यु कुछ भी नहीं सोचती ।।१।।

धन तथा बल से सम्पन्न तथा बुद्धि वैभव से युक्त किसी को भी (यह) अजेय मृत्यु नहीं छोड़ती ।।२।।

माता रोती रहती, पिता चिल्लाता रहता, फिर भी यह अजेय मृत्यु प्रभावित नहीं हो पाती ।।३।।

युवा, बच्चा अथवा बूढ़ा सबको अपना ग्रास बना लेती है।।४।।

अत्यन्त फैले हुए कार्य से व्याप्त जन को भी एकाएक अजेय मृत्यु आलिङ्गन कर लेती है ।।५।।

अत्यन्त कुशल चिकित्सक के द्वारा इलाज किए हुए तथा बिना इलाज किए हुए दोनों के पास यह अजेय मृत्यु पहुँच जाती है ।।६।।

यह उग्र अजेय मृत्यु सतत भटकती फिरती है । जन्मकाल से ही सब इसकी प्रतीक्षा करते हैं ।।७।।

यह कब पैदा हुई तथा इसका अन्त कब होगा, यह किसी को भी मालूम नहीं होने देती ।।८।।

यहाँ 'यह सबसे बड़ा सत्य है, या वह सबसे बड़ा है' इस विषय में मैं यही मानता हूँ कि यह अजेय मृत्यु ही परम सत्य है ।।९।।

त्रेता, द्वापर, सत्य युग तथा कलियुग में विद्यमान यह अजेय मृत्यु गर्व के साथ नाचती है ।।१०।।

अजेय मृत्यु यहाँ क्रुद्ध होती है, वहाँ पहुँचती है, वहाँ से भी खींचती है ।।११।।

युद्ध में, आतंक में, महामारी में और विपत्ति में भी अजेय मृत्यु सन्तुष्ट नहीं होती ।।१२।।

यह दुष्ट मृत्यु अनेक कारणों पर आश्रित है। यह अजेय मृत्यु एकाएक आ धमकती है ।।१३।।

अनेकों द्वारा चिन्तन करने पर भी अपना रहस्य अजेय मृत्यु नहीं समझने देती ।।१४।।

ooooo

(६५)

घनश्याम आनन्दधाम प्रकामम् ।
शुभं शान्तिदं चारु नाम प्रकामम् ।।१।।
कचो भाति बर्हेण विद्योतमानः ।
गले शोभते मौक्तिदाम प्रकामम् ।।२।।
मुखं तस्य राजीवनेत्रं विचिन्त्य ।
वयं धन्यधन्या भवाम प्रकामम् ।।३।।
कटौ भूषितौ कङ्कणै रत्नगर्भैः ।
करौ शोभनं काञ्चिदाम प्रकामम् ।।४।।
रणन्नूपुरालङ्कृतं पादयुग्मम् ।
मुरारेर्मुहुः संस्राम प्रकामम् ।।५।।
कलं वेणुनादं निशम्याच्युतस्य ।
विमुग्धेव मुग्धा भवाम प्रकामम् ।।६।।
भवाब्धौ निमग्ना वयं भूरिभावैः ।
'हरे कृष्ण' मन्त्रं जपाम प्रकामम् ।।७।।
मुदा रासमध्ये रतं राधिकेव ।
हरिं चेतसानुव्रजाम प्रकामम् ।।८।।
हरिं यामुने तीरदेशेऽङ्गनाभिः ।

प्रियाभिर्नटन्तं स्मराम प्रकामम् ।।९।।

रसज्ञेन वृन्दावने मोहनेन ।

समं जीवनं स्वं नयाम प्रकामम् ।।१०।।

दधिव्याजगोपाङ्गनारागरक्तम् ।

मुकुन्दं समालोकयाम प्रकामम् ।।११।।

वने बन्धुभि र्गोकुलं चारयन्तम् ।

प्रियं कृष्णमालोकयाम प्रकामम् ।।१२।।

मुदा माधवं राधिकालिङ्गिताङ्गम् ।

स्मरन्तो वयं नन्दयाम प्रकामम् ।।१३।।

निकुञ्जास्पदं प्राप्तया राधया तम् ।

प्रतीक्ष्यं हरिं भवयाम प्रकामम् ।।१४।।

हरे कृष्ण गोविन्द गोपाल विष्णो ।

इति श्रद्धया संवदाम प्रकामम् ।।१५।।

अनेनातिपूतेन मन्त्रेण नूनम् ।

अघौघं निजं नाशयाम प्रकामम् ।।१६।।

भावार्थ - घनश्याम अतिशय आनन्द के आश्रय हैं। यह (घनश्याम) नाम शुभ शान्तिदायक तथा अत्यन्त सुन्दर है।।१।।

(घनश्याम के) केश मयूर पंख से चमकता हुआ शोभता है। गले में मोती की माला अतिशय शोभती है।।२।।

उनके कमलनयन मुख को सोचकर हम बहुत धन्य-धन्य हो जाते हैं ।।३।।

रत्नजटित कङ्गनों से दोनों हाथ सुशोभित हैं। कमर में अत्यन्त सुशोभित कमरधनी है ।।४।।

कृष्ण के शब्दायमान नूपुर से अलंकृत चरणयुगल को हम बार-बार स्मरण करते हैं ।।५।।

कृष्ण के मधुर मुरली-ध्वनि सुनकर विमुग्धा नायिका की भाँति हम बहुत मुग्ध हो जाते हैं ।।६।।

संसाररूपी समुद्र में डूबे हुए हम पूरी भक्ति भाव से 'हरे कृष्ण' इस मंत्र का जप करते हैं ।।७।।

रासलीला के बीच आनन्द से रमे हुए कृष्ण को राधिका की भाँति हम हृदय से अतिशय अनुगमन करते हैं।।८।।

यमुना के किनारे प्रिय प्रमदाओं के साथ नाचते हुए भी नटखट करते हुए कृष्ण को हम बहुत याद करते हैं।।९।।

रसज्ञ मोहन के साथ वृन्दावन में हम अपना समग्र जीवन बितावें ।।१०।।

दधि के बहाने गोप बालाओं के राग में रमे हुए मुकुन्द को हम बहुत निहारें ।।११।।

वन में सखाओं के साथ गायों के झुण्ड को चराते हुए प्रिय कृष्ण को हम अतिशय निहारें ।।१२।।

खुशी से राधिका के द्वारा आलिङ्गित अंग वाले माधव को हम अत्यन्त स्मरण करते हुए प्रसन्न होवें।।१३।।

निकुञ्ज के निर्धारित स्थान पर पहुँची हुई राधा के द्वारा प्रतीक्षा किये जाते हुए कृष्ण को हम बहुत याद करें।।१४।।

हरे, कृष्ण, गोविन्द, गोपाल विष्णो यह हम श्रद्धा के साथ बोलें ।।१५।।

निश्चय ही इस अत्यन्त पवित्र मंत्र से हम अपने पाप समूह को समग्र नाश करें ।।१६।।

ooooo

(६६)

नयामि किंप्रतीक्षया नक्तम् ।
न रोचते हताशया नक्तम् ।।१।।
कदाचिदिन्दुकौमुदीछन्नम् ।
रतिप्रदातृ स्वश्रिया नक्तम् ।।२।।
कदाचिदन्धमुत्कटं दीनम् ।
विभाति मेघमालया नक्तम् ।।३।।

उलूकदर्दुरादिभिर्भीमम् ।
अमासु वृष्टिधारया नक्तम् ।।४।।
नवीनदम्पती नयेतां तत् ।
सुखेन केलिलीलया नक्तम् ।।५।।
कदाचिदत्र कौतुकागारे ।
नयन्ति मद्यसेवया नक्तम् ।।६।।
ततश्च बालवृद्धबालास्तु ।
नयन्ति तद्बुभुक्षया नक्तम् ।।७।।
इतोऽद्य याति धन्यधन्यानाम् ।
सुखं समद्यलीलया नक्तम् ।।८।।
ततस्तु भाययेदधन्यांश्च ।
सदुःखभाविचिन्तया नक्तम् ।।९।।
श्रमश्लथाङ्गकर्मशीलानाम् ।
प्रयाति घोरनिद्रया नक्तम् ।।१०।।
श्रमं विना निषेदुषो नूनम् ।
न चान्तमेत्यनिद्रया नक्तम् ।।११।।
प्रियाप्रियद्वयं पुरा रन्तुम् ।
समीहते च लज्जया नक्तम् ।।१२।।
रतिप्रियत्वदर्शनायाद्य ।
अपेक्षते न लज्जया नक्तम् ।।१३।।
प्रतीक्षतेऽभिसारिका साकम् ।
प्रियेण सङ्गमेच्छया नक्तम् ।।१४।।
तमोवृतं च दस्युचौरादिः ।
समीहते स्वलीलया नक्तम् ।।१५।।
कला समग्रसाधुसम्पन्नम् ।
सुधांशुमिच्छति प्रिया नक्तम् ।।१६।।

भावार्थ – मैं किसकी प्रतीक्षा में रात बिता रहा हूँ ? टूटी हुई आशा के कारण

रात अच्छी नहीं लगती ।।१।।

कभी चन्द्रमा की किरण से व्याप्त अपनी शोभा से प्रेम (या संगम सुख) को देने वाली रात होती है ।।२।।

कभी अन्धियारी, कष्टप्रद, दुःखपूर्ण मेघमाला से घिरी हुई रात होती है ।।३।।

अमावस को वर्षा से उल्लू की आवाज़ दादुर आदि की ध्वनि से भयङ्कर रात होती है ।।४।।

नवदम्पत्ति उस रात को रतिक्रीड़ा से सुखपूर्वक बिताते हैं।।५।।

(कुछ लोग) यहाँ कहीं क्लब आदि में मदिरा सेवन करके उस रात को बिताते हैं ।। ७।।

उधर कहीं बच्चे बुजुर्ग तथा बालाएँ उस रात को भूखे बिताते हैं ।।७।।

इधर रईस लोगों की रात मदिरा के साथ मौजमस्ती से सुखपूर्वक बीतती है ।।८।।

उधर तो अभागों को दुःखपूर्वक भावी चिन्ता से रात डराती है ।।६।।

परिश्रम शिथिल अङ्गों वाले काम करने वाले लोगों की रात गम्भीर नींद से बीतती है ।।१०।।

परिश्रम के बिना बैठे रहने वाले की रात निश्चय ही नींद के बिना बीतती नहीं रहती ।।११।।

प्रेमी-प्रेमिका दोनों लाज के कारण पहले ही रमण करने के लिए रात चाहते हैं ।।१२।।

आजकल (अपनी) सम्भोगप्रियता को दिखाने के लिए (कुछ लोग) लाज के कारण रात की अपेक्षा नहीं करते । अर्थात् दिन में भी निर्लज्ज होकर कामक्रीड़ा करते रहते हैं ।।१३।।

प्रेमी के साथ मिलन की इच्छा से अभिसारिका रात की प्रतीक्षा करती है ।।१४।।

चोर आदि अपनी चौर्यवृत्ति के कारण अंधियारी रात चाहते हैं ।।१५।।

प्रियतमा सम्पूर्ण कलाओं से भलीभाँति सम्पन्न चन्द्र को रात में चाहती हैं।।१६।।

ooooo

(६७)

भानवमरुणं सान्ध्यं तेजः ।
नभोरञ्जनं सान्ध्यं तेजः ॥१॥
स्फुटदनुरागं सुभगं कलयति ।
रजनीवदनं सान्ध्यं तेजः ॥२॥
गङ्गाम्भसि विम्बितमवभाति च ।
कालीवदनं सान्ध्यं तेजः ॥३॥
प्रकृतिविरूपविलोकनविकृत- ।
कोपवेदनं सान्ध्यं तेजः ॥४॥
सायं सुरयुवती शृंगार- ।
प्रचयलक्षणं सान्ध्य तेजः ॥५॥
संहृतजगदनुरागप्रचितैः ।
रवेः प्रयाणं सान्ध्यं तेजः ॥६॥
भानुसमर्पित जपाकुसुमवलि- ।
प्रचयदर्शनं सान्ध्यं तेजः ॥७॥
धृतरक्ताम्बरदेवकुलानाम् ।
अब्धिगाहनं सान्ध्यं तेजः ॥८॥
दिवसश्रमरक्ताभतनोरथ ।
जले मज्जनं सान्ध्यं तेजः ॥९॥

भावार्थ - सन्ध्याकालिक सूर्य का प्रकाश लाल है। यह सन्ध्याकालिक प्रकाश आकाश को लाल कर देता है ॥१॥

यह सन्ध्याकालिक प्रकाश रातरूपी नायिका के मुख को प्रेम प्रकट करने वाला सुन्दर बना देता है ॥२॥

यह सन्ध्याकालिक तेज गंगा के जल में प्रतिबिम्बित होकर काली के मुख की तरह लाल लगता है ॥३॥

यह सन्ध्याकालिक तेज मानो पर्यावरण प्रदूषण को देखने के कारण सूर्य के कोप की अभिव्यक्ति है ॥४॥

यह सन्ध्याकालिक तेज मानो सन्ध्याकाल में देवाङ्गनाओं के शृङ्गार

प्रसाधन का चिह्न है ।।५।।

यह सन्ध्याकालिक तेज मानो संसार के अनुराग सामग्री को समेटे हुएसूर्य की यात्रा है ।।६।।

सूर्य के द्वारा प्रदत्त जपा पुष्प (ओढुल के फूल) की ढेर की भाँति यह सन्ध्याकालिक तेज लग रहा है ।।७।।

लाल वस्त्र धारण किए हुए देवताओं के समुद्र में प्रवेश को यह सन्ध्याकालिक तेज सूचित कर रहा है ।।८।।

यह सन्ध्याकालिक तेज दिन के परिश्रम के कारण लाल देह वाले सूर्य का जल में स्नान को सूचित कर रहा है ।।९।।

ooooo

(६८)

मनो मदीयमुन्मदं केन ।
दधाति मत्सरं मलं केन ।।१।।
सदान्यदीयनिन्दयाऽऽसक्तम् ।
पराभिवन्दनेऽरसं केन ।।२।।
समाधिमाकलय्य तल्लीनम् ।
भवेत्क्षणेन चञ्चलं केन ।।३।।
उपेत्य काम्यमप्यलं सद्यः ।
पुनः समीहते नवं केन ।।४।।
धनेन वा बलेन बुद्ध्या वा ।
उपेक्षते पुरः परं केन ।।५।।
शशी तदुद्भवोऽपि कल्माषम् ।
दधाति चारु मध्यगं केन ।।६।।
अवाप्य रूपयौवनोपेताम् ।
प्रियां ततोऽपि सस्पृहं केन ।।७।।
प्रवर्त्तनेऽखिलेन्द्रियाणीह ।
तदाश्रयन्ति चञ्चलं केन ।।८।।

मलं कलध्वनिं परस्याङ्कम् ।

दधच्छिशोश्च निर्मलं केन ।।९।।

भावार्थ - मेरा मन क्यों उन्मत्त हो रहा है ? यह ईर्ष्या रूप गन्दगी को क्यों धारण करता है? ।।१।।

हमेशा दूसरे की निन्दा में लगा हुआ दूसरे की अनुशंसा में विरस क्यों हो जाता है ? ।।२।।

समाधि लगाकर तल्लीन रहकर भी क्षण भर में चंचल क्यों हो जाता है? ।।३।।

पर्याप्त मनोरथ को साक्षात् पाकर भी पुनः नयी अभिलाषा क्यों चाहने लगता है ? ।।४।।

धन से, बल से अथवा बुद्धि से अपने सामने दूसरे की उपेक्षा क्यों करता है ? ।।५।।

चन्द्रमा उस मन (परमात्मा के निर्मल) से उत्पन्न होकर भी अपने मध्य सुन्दर कलंक क्यों धारण करता है? ।।६।।

सुन्दर रूप यौवन सम्पन्न प्रियतमा को पाकर भी यह मन क्यों ललचाता है ? ।।७।।

यहाँ ये सकल इन्द्रियाँ कार्य में प्रवृत होने के समय उस चंचल मन का आश्रय क्यों लेती है ? ।।८।।

गन्दगी, अव्यक्त मधुर आवाज़ तथा दूसरे की गोद को धारण करते हुए शिशु का मन निर्मल क्यों होता है ?।।९।।

ooooo

(६६)

श्रुतं पुनाति पापिनोऽपि जाह्नवीजलम् ।

न रोचते तु दुर्भगाय तन्नदीजलम् ।।१।।

निवासमेत्य तीरदेशमेष वर्त्तते ।

न सेवतेऽवहेलया ततो हठी जलम् ।।२।।

जलेन शाम्यति प्रचण्ड उच्छिखोऽनलः ।

ददाह वेश्म नेत्रपाति जानकीजलम् ।।३।।

कदाचिदेव सुप्रसिद्धपर्वणि प्रभोः ।
प्रसादनाय मुञ्चतीह सुव्रती जलम् ।।४।।
पवित्रमातनोति विश्वमत्र जाह्नवी ।
यतो हि चास्ति शूलिनो जटाटवीजलम् ।।५।।
वियद्विसारि वारिदाकृतं विलक्षणम् ।
बिभर्त्ति जन्तुजीवनं तु मेदिनीजलम् ।।६।।
विभातु देवमातृभूमिरन्नसम्पदा ।
अदेवमातृका त्वपेक्षते नदीजलम् ।।७।।
महोर्मिमादधज्जलौघमानयत्क्वचित् ।
प्रजाः प्रपीडयत्प्रयाति कौशिकीजलम् ।।८।।
कदाचिदत्र जन्तुजीवनं हि बाधते ।
समुद्रसन्निभं करोति गण्डकीजलम् ।।९।।

भावार्थ – सुना है कि पापियों को भी गंगा का जल पवित्र कर देता है। फिर भी अभागे को उस गंगा नदी का जल अच्छा नहीं लगता ।।१।।

गंगा के किनारे को अपना निवास बनाकर भी कुछ लोग रहता है। किन्तु फिर वह हठी व्यक्ति अनादरपूर्वक उस गंगाजल का सेवन नहीं करता ।।२।।

प्रचण्ड धधकती हुई आग जल से शान्त होती है, किन्तु आँख से गिरने वाला जानकी का जल (अश्रुरूपी) ने घर को (लंका को) जला दिया ।।३।।

कभी सुप्रसिद्ध पर्व में (हरिबोधिनी आदि में) भगवान् को प्रसन्न करने के लिए नियमपूर्वक व्रत करने वाले यहाँ जल को (भी) छोड़ देते हैं ।।४।।

यह विश्व को पवित्र करती है, क्योंकि यह शम्भु की जटा रूपी वन से आती है ।।५।।

आकाश में फैले बादलों से बरसाया हुआ धरती का विलक्षण जल जीवों के जीवन की रक्षा करता है ।।६।।

वर्षा पर निर्भर जमीन अन्न की पूर्णता से शोभित हो, किन्तु जो जमीन वर्षा पर निर्भर नहीं होती उसे तो नदी के जल की अपेक्षा होती है ।।७।।

कहीं उग्र तरंग को धारण करने वाला कोशी का जल बाढ़ ले आता है

तथा लोगों को परेशान करता चलता है ।।८।।

कभी यहाँ गण्डक का जल प्राणियों के जीवन को बाधित करता है तथा समुद्र जैसा रूप बना देता है ।।९।।

ooooo

(७०)

गुणिनि निमज्जति शशिनि कलङ्कः ।
स्फुटति मुहुर्मुहुरगुणिनिकलङ्कः ।।१।।
हतितातिकृतिरिव बहुबलशालिनि ।
कुटिलाचरणं धनिनि कलङ्कः ।।२।।
कज्जलचिह्नं धवलाम्बर इव ।
स्फुटमवभाति सुकृतिनि कलङ्कः ।।३।।
तिलचिह्नं सुमुखीवदनेऽपि च ।
अलिरिव लसति सुमनसि कलङ्कः ।।४।।
विपिने शुचिदावानल उद्गत ।
आतङ्किन इव धरणिकलङ्कः ।।५।।
चरति महातपमुग्रतरं ननु ।
प्रमदासङ्गो वशिनि कलङ्कः ।।६।।
बिभ्रति कुलमतिकुशलतयापि च ।
अतिथिविमुखता गृहिणि कलङ्कः ।।७।।
हरिवासरमुपवसति भजत्यपि ।
अनृतभाषणं व्रतिनि कलङ्कः ।।८।।

भावार्थ - गुणवान् चन्द्रमा में कलंक (धब्बा) डूब जाता है या छुप जाता है। किन्तु गुणहीन का कलंक बार-बार प्रकट होता रहता है ।।१।।

अतिशय बलशाली व्यक्ति में अनेक हत्या आदि का कृत्य भी छुपा रह सकता है, उसी तरह धनवान् में दुराचार रूप कलंक भी ।।२।।

उजले वस्त्र में काजल आदि का काला दाग जैसे प्रकट हो जाता है उसी

तरह पुण्यात्मा व्यक्ति में कलंक प्रकट हो जाता है ।।३।।

सुन्दर मुख वाली नायिका के चेहरे पर तिल के चिह्न की भाँति फूल पर भौंरा रूप कलंक शोभता है ।।४।।

जंगल में ग्रीष्मकालिक दावानल जैसे (कहीं) धधक उठता है उसी तरह आतंक पैदा करने वाले धरती के कलंक हैं ।।५।।

उग्रतर महान् तपस्या करने वाले संन्यासी में युवती की आसक्ति कलंक है ।।६।।

अपने परिवार का कुशलपूर्वक भरण-पोषण करने वाले गृहस्थ में अतिथि (अभ्यागत) से मुँह मोड़ लेना कलंक है ।।७।।

हरिवासर का उपवास रखने वाले तथा (भगवान् को) भजन करने वाले व्रती जन में झूठ बोलना कलंक है।।८।।

००००

(७१)

साधु जीवातवेऽयं जलं पीयते ।
तृप्तिदां किन्तु हालामलं पीयते ।।१।।
दूषितं वारिचान्नं फलं व्यञ्जनम् ।
वक्ति लोकोऽधुनालं मलं पीयते ।।२।।
रोगशोकाकुलं सर्वतो जीवनम् ।
भेषजं मन्दहालाहलं पीयते ।।३।।
मन्दिरे चापणे द्वारि मध्येसभम् ।
मुग्धबालामुखं चञ्चलं पीयते ।।४।।
नैकभेदं सदा चर्चितं साम्प्रतम् ।
शीतपेयं मुदा विह्वलं पीयते ।।५।।
उत्थितः स्वापतः सर्वतः प्रागसौ ।
प्रातरुष्णोदकं व्याकुलं पीयते ।।६।।
दूरभाषेऽर्पितं नव्यगीतं पिबन् ।
नैव गीतामृतं निष्कलं पीयते ।।७।।
गान्धिदेशे प्रसिद्धेऽत्र लोको मुदा ।

मद्यमद्यापि मध्येदलं पीयते ।।८।।

कश्चिदेकः पिबेन्मौनमालम्ब्य तत्र् ।

कश्चिदन्यः सकोलहलं पीयते ।।९।।

पीयते पीयते मूर्च्छितः पीयते ।

चेतनः सन् पुनः संवलं पीयते ।।१०।।

भावार्थ - यह (कोई) जीने के लिए अच्छा जल पीता है, किन्तु तृप्ति देने वाली मदिरा पर्याप्त पीता है ।।१।।

आजकल जल, अन्न, फल, सब्जी सब कुछ दूषित है । लोग कहता है कि (आदमी) पर्याप्त मल (विष) पी रहा है ।।२।।

सब जगह जीवन रोग और शोक से परेशान है । दवा के रूप में आदमी मन्द विष (Slow Poison) पीता है।।३।।

मन्दिर में, बाज़ार में, दरवाजे पर, सभा के बीच (सब जगह) आदमी भोली-भाली बालाओं का चंचल मुखपान करता है।।४।।

आजकल हमेशा प्रचारित अनेक प्रकार का ठंढा पेय खुशी से व्याकुल होकर आदमी पीता है ।।५।।

नींद से जागा हुआ यह आदमी सबसे पहले सुबह को व्याकुल होकर उष्णोदक (चाय) पीता है ।।६।।

अपने दूरभाष (मोबाइल) में सेट नया फिल्मी गीत सुनता हुआ आदमी निर्मल गीतामृत नहीं पीता ।।७।।

आज यहाँ प्रसिद्ध गाँधी के देश में आदमी खुशी से अपने राजनीतिक दल के बीच भी मदिरा पीता है ।।८।।

कोई एक चुपचाप पीता है और कोई दूसरा हल्ला करता हुआ पीता है ।।९।।

बार-बार पीता है और मूर्च्छित होता है पुनः पीता है, होश में आने पर पुनः अपना संवल (जीवनाधार) भी पी जाता है।।१०।।

ooooo

(७२)

संस्मरेच्चेतसा चञ्चलं शैशवम् ।

तत्र कस्य प्रियं निर्मलं शैशवम् ।।१।।

ज्ञानविज्ञानवर्जं मुदामाकरम् ।
चिन्तयाऽनाविलं निश्छलं शैशवम् ।।२।।

मोदते स्तन्यमापीय तन्निर्भरम् ।
मन्यते मातुरङ्कं बलं शैशवम् ।।३।।

फुल्लपुष्पं यथोद्यानमालोकितम् ।
मन्दहासं तथा मञ्जुलं शैशवम् ।।४।।

मातुराधाय हस्तं चलत्सम्पतत् ।
पितृमोदं वितन्वत्त्वलं शैशवम् ।।५।।

पूर्वमुक्तं गिराऽस्पष्टया व्याहरत् ।
सर्वमानन्दयन्मङ्गलं शैशवम् ।।६।।

क्रन्दनानन्दमिश्रं मुखं सुप्रियम् ।
संलभे केन सत्सङ्कुलं शैशवम् ।।७।।

तर्जनं बोधनं दुर्लभप्रार्थनम् ।
रोदनं सर्वहेतोर्बलं शैशवम् ।।८।।

स्वापशौचादिसर्वक्रियाहेतवे ।
यत्परालम्बनं दुर्बलं शैशवम् ।।९।।

भावार्थ - चंचल बचपन को मन से याद करें। वह निर्मल बचपन किसे प्रिय नहीं होता ? ।।१।।

ज्ञान विज्ञान से रहित खुशियों का खज़ाना चिन्ता से दूर बचपन निश्छल होता है ।।२।।

माँ का दूध पीकर निर्भर यह बचपन माँ की गोद में अपना बल मानता है ।।३।।

खिले हुए फूलों वाला उद्यान जैसे आलोकित होता है, मन्द मुस्कान से युक्त बचपन उसी तरह सुन्दर होता है।।४।।

माँ का हाथ पकड़कर चलता हुआ और गिरता हुआ पिता की खुशी को काफी बढ़ाता हुआ बचपन होता है ।।५।।

(दूसरे के द्वारा) पहले कही हुई बात को अपनी अस्पष्ट (तोतली) वाणी से बोलता हुआ सबों को आनन्द देने वाला मंगलदायक बचपन होता है ।।६।।

रोना तथा आनन्द से मिश्रित (बच्चों का) मुख अत्यन्त प्रिय होता है।

किस तरह मैं समस्त सद्गुणों की खान बचपन को पुनः पा लें ? ।।७।।

डाँटना, मनाना, दुर्लभ वस्तु की मांग तथा सब चीज़ के लिए रोना बचपन का बल होता है ।।८।।

सोना, शौचादि क्रिया के लिए जो दूसरे पर आश्रित रहता है (अतएव) यह बचपन दुर्बल होता है ।।९।।

००००००

(७३)

साधु नेत्रार्पितं कज्जलं शोभते ।
श्रोत्रलग्नं शुभं कुण्डलं शोभते ।।१।।
बालकुन्दानुबिद्धालकं तच्छिरः ।
सान्द्रसिन्दूरि चानाविलं शोभते ।।२।।
आननाब्जे हि विम्बाधरो रागवान् ।
धातुरत्यद्भुतं कौशलं शोभते ।।३।।
चारुनीलोत्पलाभं च नेत्रद्वयम् ।
सत्तिलाङ्कं च गण्डस्थलं शोभते ।।४।।
कामचापानुकारि प्रिया भ्रूयुगम् ।
भाषणं कोकिलावत्कलं शोभते ।।५।।
चारुदन्तावली कुन्दपङ्क्तिर्तथा ।
सुस्मितालोकितं चातुलं शोभते ।।६।।
कम्बूकण्ठस्तदीयोऽतिशोभाकरः ।
तत्कुचद्वन्द्वमामांसलं शोभते ।।७।।
क्षीणमध्या प्रिया कामकान्तानिभा ।
रूपमस्यास्तपस्याफलं शोभते ।।८।।
भव्यरम्भानिभं चारुजङ्घाद्वयम् ।
सद्रथाङ्ग नितम्बस्थलं शोभते ।।९।।
पङ्कजं भाति शारद्यमेवाहनि ।
पादपद्मं सदाऽनाविलं शोभते ।।१०।।

भावार्थ – सही ढंग से आँखों में लगा हुआ काजल शोभता है। कानों में लगे हुए सुन्दर कुण्डल शोभता है।।१।।

कुन्दपुष्प की कली से गूँथा हुआ उस (नायिका) का मस्तक सुन्दर सिन्दूरयुक्त व सौम्य शोभा पाता है ।।२।।

मुख कमल में लाल होंठ विधाता के अद्भुत कौशल की शोभा को पाता है ।।३।।

सुन्दर नील कमल की शोभा वाली दोनों आँखें हैं। सुन्दर तिल के चिह्न से युक्त कपोल शोभता है ।।४।।

कामदेव के धनुष के समान दोनों भौंहे हैं। कोयल की भाँति मीठी आवाज़ शोभती है ।।५।।

सुन्दर दन्तपंक्ति कुन्दकली की कतार की भाँति है, जो सुन्दर मुस्कान से अनुपम शोभती है ।।६।।

कम्बु की भाँति उसका कण्ठ अतिशय शोभादायक है। उसके (नायिका के) दोनों स्तन पूर्ण मांसल होकर शोभता है ।।७।।

कृशोदरी प्रियतमा रति की भाँति है। उसका सौन्दर्य मानो तपस्या का परिणाम है ।।८।।

भव्य कदली स्तम्भ की भाँति उसकी दोनों जाँघें हैं। सुन्दर रथ की पहिये की तरह उसका नितम्ब स्थल है।।९।।

शरद् ऋतु का कमल तो दिन में ही शोभता है किन्तु उस (नायिका) का चरण कमल हमेशा निर्व्याज शोभता है।।१०।।

ooooo

(७४)

मदमण्डितमलसं तारुण्यम् ।

मानमुदितमवशं तारुण्यम् ।।१।।

प्रमदालोलुपमलमविवेकम् ।

सततं कामवशं तारुण्यम् ।।२।।

सहजस्पर्शपरमसुखमूलम् ।

कलयति कुचकलशं तारुण्यम् ।।३।।

प्रबलमरिं वत तृणमिव तुच्छम् ।

मनुते स्वं त्रिदशं तारुण्यम् ।।४।।

जरतां वचनं पथ्यमपथ्यम् ।

गणयति मदविवशं तारुण्यम् ।।५।।

गर्वविमर्दितमतिगुरुजनमपि ।

अवहेलयति भृशं तारुण्यम् ।।६।।

वयसोमदपरिगतमपि वाञ्छति ।

मद्यमदं सरसं तारुण्यम् ।।७।।

खादतमोदतेति कमनीयम् ।

मनुते ह्यादर्शं तारुण्यम् ।।८।।

अतिदुष्करमपि कर्म विधातुम् ।

यतते सहरभसं तारुण्यम् ।।९।।

भावार्थ - मद से चूर आलस्ययुक्त यौवन (युवावस्था) होता है। गर्व से मस्त विवश यौवन होता है ।।१।।

युवती में ललचाया पर्याप्त अविवेक से युक्त हमेशा कामदेव के वश में यौवन होता है ।।२।।

(नायिका) के कुचकलश का सहज स्पर्श परमानन्द का मूल यह यौवन मानता है ।।३।।

यौवन प्रबल शत्रु को भी घास की भाँति तुच्छ मानता है और अपने को देवता मानता है ।।४।।

बुजुर्गों का हितवचन अहितकर मानता है। यह यौवन अहंकार के वश में होता है ।।५।।

गर्व से चूर परम गुरुजन को भी यह यौवन अतिशय तिरस्कृत कर देता है।।६।।

उमर की नशा से चूर होकर भी यह यौवन सरस मदिरा की नशा चाहता है ।।७।।

यौवन "खाओ पीयो" मौज करो इस तरह का मनोनुकूल आदर्श बना

लेता है ।।८।।

यौवन अत्यन्त दुष्कर कार्य करने के लिए भी तुरत तैयार रहता है ।।९।।

०००००

(७५)

दिवा न पीनविग्रहोऽप्ययं भुङ्क्ते ।
स नक्तमेव सर्वभोजनं भुङ्क्ते ।।१।।
श्रमश्लथाङ्गभद्रकर्मशीलोऽयम् ।
यदागतं हि तद् दिवानिशं भुङ्क्ते ।।२।।
इतोऽधुनापि देवमातृकाभूमिः ।
न वारिदो दयेत कोऽपि किं भुङ्क्ते ।।३।।
सतो निहन्त्यकिञ्चनान् तुदेद्योऽयम् ।
इहैव सोऽतिदुष्कृतेः फलं भुङ्क्ते ।।४।।
फलन्ति शाखिनो धरा च शस्यानि ।
तथापि लोक एष आमिषं भुङ्क्ते ।।५।।
समानमेव शृङ्गमागतावेतौ ।
यदेष वीक्षतेऽपरोर्थपिप्पलं भुङ्क्ते ।।६।।
इहाधुनापि सत्पथा व्रजेद् योऽयम् ।
स रोटिकां विनापि व्यञ्जनं भुङ्क्ते ।।७।।
जनः कदाचिदन्नमत्ति मोदेत ।
कदाचिदन्नमेव तं स्वयं भुङ्क्ते ।।८।।

भावार्थ - यह मोटा शरीर वाला भी दिन में नहीं खाता। वह रात को सर्व भोजन या सब तरह का भोजन कर लेता है ।।१।।

परिश्रम के चूर-चूर अंग वाला तथा सही काम करने वाला यह जो कुछ ही पा लेता है, वही दिन-रात खाता है ।।२।।

इधर आज भी वर्षा पर निर्भर जमीन है, यदि मेघ दया न करे, तो फिर कौन क्या खाए ।।३।।

यह जो सज्जनों को मारता है और गरीबों को परेशान करता है, वह

यहीं अपने इस दुराचार का फल भोग लेता है ।।४।।

वृक्ष फल देते हैं तथा जमीन फसल देती है फिर यह आदमी मांसादि खाता है ।।५।।

एक ही शिखर पर पहुँचे हुए ये दोनों पक्षी हैं। इनमें से एक केवल देखता है और दूसरा अर्थरूप पीपल खाता है ।।६।।

यह आदमी जो इस समय भी सही रास्ते चलता है वह बिना सब्जी का ही रोटी खा पाता है ।।७।।

कभी आदमी अन्न खाता है और मस्त रहता है, कभी अन्न ही उसे स्वयं खाता है ।।८।।

ooooo

(७६)

तव स्मृतिर्मदीयमानसं तुदत्यहर्निशम् ।
न वेद्मि किं ततोऽपि जीवितुं नुदत्यहर्निशम् ।।१।।
प्रयोजनं न दृश्यते पुरो ममाधुना सखे ।
मनो मुधा तथापि सर्वतो भ्रमत्यहर्निशम् ।।२।।
समग्रजीवने कृतं नवं नवं प्रकल्पनम् ।
विसर्जितं पुनः कृतं क्रमश्चलत्यहर्निशम् ।।३।।
त्वदीयनाम साम कामदामपिञ्जरीकृते ।
मदीयमानसे चलेऽसिते भवत्यहर्निशम् ।।४।।
प्रवर्त्तते निवर्त्तते पुनः प्रवर्त्तते जनः ।
प्रवृत्तितश्च्युतोऽपि कोऽपि किं जयत्यहर्निशम् ।।५।।
उदेति चास्तमेति भानुरेष सूचयन्निति ।
क्रमोऽयमेव जन्तुजीवने व्रजत्यहर्निशम् ।।६।।
दिवा रविः प्रकाशते निशं निशाकरः क्वचित् ।
प्रदीपमालिकाप्रकाशितं लसत्यहर्निशम् ।।७।।
इदं हि जन्तुजीवनं प्रभोः कृपावलम्बितम् ।
अतो विहाय दुष्कृतं बुधो जपत्यहर्निशम् ।।८।।

भावार्थ - तेरी याद मेरे मन को दिन-रात परेशान करती है। फिर भी न जाने क्यों जीने के लिए दिन-रात प्रेरित करती है ।।१।।

हे मित्र ! इस समय मेरे सामने कोई प्रयोजन नहीं दिखता। फिर भी बेकार मेरा मन सब ओर दिन-रात भटकता फिरता है।।२।।

जीवन भर नई-नई कल्पना करता रहा। कभी छोड़ दी फिर कल्पना की, यह क्रम दिन-रात चलता रहता है।।३।।

कामरूपी डोरी से जकड़े हुए चंचल मलिन मेरे मन में दिन-रात तेरा नाम ही सान्त्वना देता है ।।४।।

दिन-रात आदमी प्रवृत्त होता है, फिर रुक जाता है, फिर प्रवृत्त है, जो कोई प्रयास से वंचित हो जाता है, क्या वह जीत पाता ? ।।५।।

यह सूरज उगता है, अस्त होता है, यह सूचित करता हुआ कि प्राणी के जीवन में भी यह क्रम दिन-रात चलता रहे।।६।।

सूरज दिन को प्रकाशित करता है चन्द्रमा कहीं रात को। प्रदीप माला के द्वारा प्रकाशित दिन-रात शोभित होता है ।।७।।

यह प्राणी का जीवन भगवान् की कृपा पर निर्भर है । इसलिए दुष्कर्म को छोड़कर ज्ञानी जन दिन-रात प्रभु का नाम जपते हैं ।।८।।

ooooo

(७७)

रविरञ्जनमिव सान्ध्यं तेजः ।
जपाकुसुममिव सान्ध्यं तेजः ।।१।।
खलकृत्याहतकुपितकालिका-
जिह्वातलमिव सान्ध्यं तेजः ।।२।।
बहुरावणकृतदुष्कृतिभावित-
मारुतिमुखमिव सान्ध्यं तेजः ।।३।।
रजनीरमणीकृतशृङ्गार-
सुभगचिह्नमिव सान्ध्यं तेजः ।।४।।
रविपथबाधकदानवदारण-

सृतशोणितमिव सान्ध्यं तेजः ।।५।।

सुरकृतसान्ध्यसपर्यार्पितबहु-

रक्तपुष्पमिव सान्ध्यं तेजः ।।६।।

निशानायिका स्वागत सज्जित-

रक्ताम्बरमिव सान्ध्यं तेजः ।।७।।

गङ्गाम्भसि लम्बितमिदमद्भुत-

नीराजनमिव सान्ध्यं तेजः ।।८।।

कामरवहनसमुधत सुरगण-

वसनविम्बमिव सान्ध्यं तेजः ।।९।।

भावार्थ - सूरज को अनुरंजित करने जैसा यह सन्ध्याकालिक प्रकाश है। ओढुल फूल की भाँति यह सन्ध्या कालिक प्रकाश है।।१।।

दुर्जन के दुष्कर्म से आहत क्रुद्ध कालिका के जिह्वा-तल की भाँति यह सन्ध्याकालिक प्रकाश है ।।२।।

(आजकल) अनेक रावण के दुष्कर्म से प्रभावित हनुमान् जी के मुख की भाँति यह सन्ध्याकालिक प्रकाश है।।३।।

रात रूपी नायिका के द्वारा किए गये शृंगार के सौभाग्य का चिह्न यह सान्ध्य प्रकाश है ।।४।।

सूर्य के मार्ग को रोकने वाले दानव की हत्या से बहते खून की भाँति यह सन्ध्याकालिक लाल प्रकाश है।।५।।

देवताओं द्वारा की गई सन्ध्याकालिक पूजा में दिए गए बहुत फूल की भाँति यह सन्ध्याकालिक प्रकाश है।।६।।

रात रूपी नायिका के स्वागत में सजाए गये लाल वस्त्र की भाँति यह सन्ध्याकालिक प्रकाश है ।।७।।

गंगा के जल में प्रतिबिम्बित यह विस्मयकारी आरती की भाँति सन्ध्याकालिक लाल प्रकाश है ।।८।।

कामर ढोने के लिए तैयार देवता गण के वस्त्र के प्रतिबिम्ब की भाँति यह सन्ध्याकालिक प्रकाश है ।।९।।

ooooo

(७८)

राजति सुकृतविपाको नित्यम् ।
फलति वचसि मधुपाको नित्यम् ॥१॥
चिररोगाक्रान्तं गुरुजनमपि ।
मनसो शुश्रूषति को नित्यम् ॥२॥
जठरानलशमनाय श्रमिकः ।
श्रममाचरति वराको नित्यम् ॥३॥
दुराचरणमतिदुःखदमित्यपि ।
अघमाश्रयते लोको नित्यम् ॥४॥
कूजति कोकिलकुलमतिकलमुत ।
रौति दुःश्रवं काको नित्यम् ॥५॥
लभतां क्षणिकोन्नतिं कदाचि- ।
न्न च मिथ्याजल्पाको नित्यम् ॥६॥
क्रूरं दुश्चरितं विप्रं ननु ।
अतिवर्त्तते श्वपाको नित्यम् ॥७॥
अलङ्कारगुणसहितेऽदोषे ।
काव्ये रसपरिपाको नित्यम् ॥८॥

भावार्थ – पुण्यकर्म का परिणाम हमेशा शोभता है। वाणी में मिठास सदा सफल होता है ॥१॥

सदा रोगग्रसित गुरुजन को भी मन से कौन हमेशा सेवा करना चाहता है ? ॥२॥

पेट की आग को शान्त करने के लिए बेचारा मज़दूर हमेशा मेहनत करता है ॥३॥

दुराचार अतिशय दुःखदायक होता है। फिर भी आदमी पाप का आश्रय लेता है ॥४॥

इधर कोयल समूह मीठी आवाज़ करता है, उधर कौआ कर्कश आवाज़

हमेशा करता है ।।५।।

झूठ बोलने वाला कभी क्षणिक उन्नति (भले ही) पा ले, किन्तु हमेशा नहीं ।।६।।

क्रूर दुराचारी विप्र से बढ़कर निश्चय ही सदा चाण्डाल होता है ।।७।।

अलंकार और गुण से युक्त दोषरहित काव्य में हमेशा रस परिपाक होता है।।८।।

ooooo

(७६)

पुरातनं पुरस्कृतं विभाति भारतम् ।
सुविश्रुतार्यसंस्कृतिं दधाति भारतम् ।।१।।
उदारभावनाभरेण सर्वमीक्षते ।
शुभातिथेयमद्भुतं चकास्ति भारतम् ।।२।।
विरोधिदेशबाधितं सुशासितं बुधैः ।
शनैर्विकासवर्त्मनि प्रयाति भारतम् ।।३।।
गिरिप्रपातगुञ्जितं वनश्रियान्वितम् ।
प्रसिद्धजाह्नवी नदी पुनाति भारतम् ।।४।।
हिमालयोऽतितुङ्गशृङ्गपर्वतो महान् ।
प्रचण्डशत्रुतः सदैव पाति भारतम् ।।५।।
सदार्षधर्मनिर्भरं दयार्द्रविस्तरम् ।
विरोधिनेऽपि संश्रयं ददाति भारतम् ।।६।।
विभिन्नदेशमध्यशान्तिसख्यसौख्यदम् ।
नयं समग्रसम्मतं हि लाति भारतम् ।।७।।
विनाशहेतुमाणवीयमस्त्रसाधनम् ।
विकासरोधि बाधकं जहाति भारतम् ।।८।।
घृणास्पदं विनाशकारिणीं पराश्रिताम्
श्वपाककपाठपद्धतिं भृणाति भारतम् ।।९।।

भावार्थ - प्राचीन अग्रसर भारत देश शोभित होता है। सुविख्यात आर्य स[म्]
को भारत धारण करता है ।।१।।

पूरी उदार भावना से यह सब को देखता है। सुन्दर अतिथि सत्कार से युक्त भारत अद्भुत चमकता है ।।२।।

शत्रु देश से बाधित होते हुए भी कुशल राजनीतिक पण्डितों से शासित भारत धीरे-धीरे विकास के मार्ग पर अग्रसर है ।।३।।

पर्वत के निर्झर से गुंजायमान जंगलों की शोभा से युक्त भारत को सुप्रसिद्ध गंगा नदी पवित्र करती है ।।४।।

ऊँचे शिखर वाला महान् हिमालय पर्वत प्रचण्ड शत्रु से हमेशा रक्षा करता है ।।५।।

सदा आर्ष धर्म पर निर्भर रहने वाला दया से भरपूर उदार भारत शत्रु को भी आश्रय प्रदान करता है ।।६।।

अनेक प्रकार के देशों के बीच शान्ति, मित्रता तथा सुगमता प्रदान करने वाला भारत सर्वसम्मत नीति लाता है ।।७।।

विनाश के कारण, विकास को रोकने वाले बाधक परमाणु अस्त्र के साधन को भारत त्याग कर देता है।।८।।

घृणा के मूल (नफ़रत की जड़) विनाश के कारण दूसरे पर आश्रित क्रूरजनों की शिक्षा पद्धति को भारत तिरस्कृत करता है।।९।।

ooooo

(८०)

पयोदपातितं नवं वारि ।
धरामुपेत्य चाविलं वारि ।।१।।
समेत्यजाह्नवीं ततः सद्यो ।
भवेत्तदेव जाह्नवं वारि ।।२।।
मुखे निपत्य चातकस्येदं ।
समावधि प्रतुष्टिदं वारि ।।३।।
प्रणालिकामुखेन सङ्गम्य ।
नदीं प्रयाति चार्णवं वारि ।।४।।
सरिद्वरागतं हि तत्स्वादु ।

भवेदपेयमार्णवं वारि ।।५।।

सकल्मषे च पल्वले हेयम् ।

सरःसु तद्धि पावनं वारि ।।६।।

सितं तदीयवर्णमत्यन्तम् ।

मिलेच्च येन तत्समं वारि ।।७।।

यदा कदा च यत्र कुत्रापि ।

तदस्ति जन्तुजीवनं वारि ।।८।।

नदी सरः प्रणालिका वापी ।

समग्रमस्ति वारुणं वारि ।।९।।

भावार्थ - मेघ से गिराया गया नया जल पृथ्वी को पाकर (पंक मिश्रित होने से) गंदा पानी हो जाता है ।।१।।

वहाँ से साक्षात् गंगा से मिलने पर वही पानी गंगाजल बन जाता है ।।२।।

वह जल चातक के मुख में गिर कर वर्ष भर सन्तुष्ट करने वाला होता जाता है ।।३।।

नाली के द्वारा नदी से मिलकर वह जल समुद्र को प्राप्त करता है ।।४।।

महानदी में पहुँच कर वही जल स्वादिष्ट हो जाता है । (किन्तु) समुद्र में वह पीने योग्य नहीं रहता ।।५।।

वह जल गंदे गड्ढे में त्याज्य रहता है किन्तु सरोवरों में वही पवित्र बन जाता है ।।६।।

उस जल का रंग अत्यन्त उजला है, वह जिससे मिलता उसके समान बन जाता है ।।७।।

यदा कदा जहाँ कहीं वह जल प्राणी का जीवन होता है।।८।।

नदी, सरोवर, नाली या तालाब सब जल वरुण देवता से सम्बद्ध है ।।९।।

ooooo

(८१)

विश्रुताऽखिलमातृमाता मेदिनी ।
सर्वबीजप्रकृतिभूता मेदिनी ।।१।।
भुक्तये ननु कल्पताममरावती ।
कर्मणामाधारभूता मेदिनी ।।२।।
अब्धिवसनारत्नगर्भाशोभना ।
शैलकुचमण्डलाख्याता मेदिनी ।।३।।
काननालकभूषिता हरिभामिनी ।
अङ्कखेलदशेषसरिता मेदिनी ।।४।।
दैत्यकुलमातङ्कमानैषीदहो ।
तन्निहन्तुं जनितसीता मेदिनी ।।५।।
नागरोद्योगान्विता बहुविस्तृता ।
हर्म्यमण्डपकुटीयुक्ता मेदिनी ।।६।।
विष्णुनाऽऽहितशूकराकृतिनामुना ।
दन्तशिखराकृष्टनीता मेदिनी ।।७।।
अन्नफलभेषजाद्यै र्बहुभिःकिल ।
पालिताखिलजीवजनता मेदिनी ।।८।।
वन्यपादपलतासन्तानैः शुभा ।
विकासव्याजेन विहता मेदिनी ।।९।।

वार्थ – विख्यात, समस्त माताओं की माता धरती है। समस्त बीजों की प्रकृति प धरती है ।।१।।

भोग के लिए (भले ही) स्वर्ग हो, किन्तु कर्मों का आधार धरती है ।।२।।

समुद्र का वस्त्र धारण करने वाली, रत्नों से भरे गर्भयुक्त सुन्दर पर्वत प स्तन से शोभित विख्यात धरती है ।।३।।

वन रूप केशों से अलंकृत विष्णु प्रिया यह धरती है। इसकी गोद में मस्त नदियाँ खेलती हैं ।।४।।

दानव समूह ने यहाँ आतंक फैला दिया तो उसे मारने हेतु इस धरती सीता को पैदा किया ।।५।।

शहर के उद्योगों से युक्त, अत्यन्त फैली महल, मण्डप तथा कुटियों वाली यह धरती है ।।६।।

शूकररूप धारण किए हुए इस विष्णु के द्वारा अपने दाँत के अग्रभाग से खींचकर लायी गई यह धरती है।।७।।

बहुत अन्न फल औषधि वनस्पति आदि से समस्त जीव तथा मानव समूह का पालन करने वाली यह धरती है ।।८।।

जंगली वृक्ष लता आदि की शृंखलाओं से सुशोभित यह धरती विकास के बहाने बिगड़ती जा रही है ।।६।।

ooooo

(८२)

सुखयति शिशुमत्यधिका निद्रा ।
रहयति जरान्वितं सा निद्रा ।।१।।
क्षीराब्धावहिमध्यासीनम् ।
हरिमभिमवति हि माया निद्रा ।।२।।
दिवा स्वकर्मरतैरपि नक्तम् ।
सकलजनैरभिलषिता निद्रा ।।३।।
कुम्भकरणदनुजानुगामिनी ।
न रोचते गभीरा निद्रा ।।४।।
जनहितकर्म विधातुमिदानीम् ।
शासकजनैर्गृहीता निद्रा ।।५।।
श्रमशिशिलाङ्गश्रमिकाणामिह ।
दुश्शयनाप्यति सुखदा निद्रा ।।६।।
सर्वभूतसंस्थिता प्रसिद्धा ।
भवति भगवती दुर्गा निद्रा ।।७।।
स्वप्नलोकसञ्चारक्षणदा ।
दुःखदापि वा सुखदा निद्रा ।।८।।
सकलसुचिरविश्रामदायिनी ।
अनपायिनी अमेया निद्रा ।।६।।

भावार्थ – अत्यधिक नींद बच्चे को आनन्द देती है। (किन्तु) वही नींद बूढ़े को छोड़ देती है ।।१।।

क्षीर सागर में शेष नाग पर बैठे भगवान् को माया निद्रा अभिभूत कर देती है ।।२।।

दिन में अपने काम में लगे सकल जन के द्वारा रात को नींद की चाह होती है ।।३।।

कुम्भकरण दानव का अनुगमन करने वाली गहरी नींद अच्छी नहीं लगती ।।४।।

इस समय लोक कल्याण के काम को करने के लिए शासक नेता लोगों ने नींद धारण कर ली है ।।५।।

मिहनत से ढीले अंगों वाले मज़दूरों को यहाँ खराब बिछावन पर ही बहुत आरामदायक नींद होती है ।।६।।

सब प्राणियों में रहने वाली प्रसिद्ध भगवती दुर्गा निद्रा कहलाती है ।।७।।

स्वप्नलोक में विचरण करने का अवसर प्रदान करनेवाली दुःखदायिनी या सुखदायिनी निद्रा होती है।।८।।

सबों को चिरविश्राम देने वाली कभी नहीं खुलने वाली निद्रा (मृत्युरूपी) अज्ञेय है ।।९।।

ooooo

(८३)

कज्जलेनाविलं शोभनं लोचनम् ।
रक्तिमाभं भयत्रासदं लोचनम् ।।१।।
पश्यतीदं कदाचित्सखे दर्शयेत् ।
पीयते चातिहृद्यं मुखं लोचनम् ।।२।।
दुर्जनातङ्कमालोक्य साधुष्वहो ।
जायते वारिणाप्लावितं लोचनम् ।।३।।
दुष्कृतिं केनचित्संविधाय स्वयम् ।
लोकलज्जावशाच्चोरितं लोचनम् ।।४।।
सन्निरीक्ष्यापरस्य प्रकामोन्नतिम् ।

दीयते केनचित्कुत्सितं लोचनम् ॥५॥

विस्मयाविष्टसारङ्गनेत्रानुगम् ।

काव्यभाषासु पद्मोपमं लोचनम् ॥६॥

सानुरागं मदालस्ययुक्तं नतम् ।

शोभते ते प्रिये ! मादिरं लोचनम् ॥७॥

वह्निविक्षेपदक्षं मनोजान्तकम् ।

भालवर्ति श्रुतं शाम्भवं लोचनम् ॥८॥

ज्ञानविज्ञान सम्पादनाय क्षमम् ।

इन्द्रियाणां प्रसिद्धं परं लोचनम् ॥९॥

विश्वरूपं निजं दर्शयन्नच्युतः ।

दत्तवानर्जुनायाद्भुतं लोचनम् ॥१०॥

भावार्थ – काज़ल से मलिन आँख सुन्दर होती है। लाल आँख भयानक होती है ॥१॥

यह आँख कभी देखती तथा कभी दिखाती है । मनोहर चेहरे को यह पीती (भी) है ॥२॥

दुर्जनों के आतंक को देखकर सज्जनों में जल से (अश्रु से) भर जाती है । अर्थात् दुःख के कारण सज्जनों की आँखें अश्रु से डबडबा जाती है ॥३॥

किसी के द्वारा दुराचार कर लेने पर स्वयं लोक लाज के कारण आँख चुराई जाती है ॥४॥

दूसरे की अतिशय उन्नति को देखकर किसी के द्वारा बुरी नज़र लाई जाती है ॥५॥

विस्मय से भरी मृग के नेत्र का अनुकरण करने वाली आँख काव्य की भाषाओं में कमल के समान कहलाती है ॥६॥

हे प्रिये ! प्रेम से भरी मद और आलस्य युक्त झुकी हुई तेरी मदिर आँख शोभती है ॥७॥

आग छोड़ने वाली कामदेव को भस्म करने वाली ललाट पर विराजमान शम्भु की आँख विख्यात है ॥८॥

ज्ञान-विज्ञान को सम्पादित करने में कुशल समस्त इन्द्रियों में सर्वोत्कृष्ट प्रसिद्ध आँख होती है ।।९।।

अपना विराट रूप दिखाते हुए भगवान् ने अर्जुन को अद्भुत (दिव्य) आँख दी थी ।।१०।।

ooooo

(८४)

किमु मानसमभिलषति मरालः ।
कलरवमपि न हि नदति मरालः ।।१।।
जनपदजलमपि मलरहितं स्यात् ।
इत्यपि नहि चिन्तयति मरालः ।।२।।
किमिह पयोजलमिश्रं किं न च ।
भेदमिमं विस्मरति मरालः ।।३।।
विसकिसलयदलमपि पाथेयम् ।
वत सरभसमुत्सृजति मरालः ।।४।।
नगसरिताजलमनाविलं यत् ।
तदपि कलुषमनुभवति मरालः ।।५।।
वाणीवाहनतया सुविदितम् ।
सुमतिसाधनं नुदति मरालः ।।६।।
प्रेमिविरहवृत्तं दूरादपि ।
सफलतया संवहति मरालः ।।७।।
अविकलसुखदनिसर्गं रक्षतु ।
इति सकलं सूचयति मरालः ।।८।।
शोभनवपुरथवास्तु कुरूपम् ।
यत्तत्सहसा त्यजति मरालः ।।९।।

भावार्थ - हंस क्यों मानसरोवर को चाहता है। कलरव (मीठी आवाज़) भी यह हंस नहीं करता ।।१।।

जनपद का पानी भी निर्मल होगा, यह भी हंस नहीं सोचता ।।२।।

यहाँ कौन सा जल दूधमिश्रित है, कौन नहीं है, हंस इस भेद को भी भूल

जाता है ।।३।।

मृणाल तथा कोमल पत्ते का पाथेय भी शीघ्रता के कारण हंस छोड़ रहा है।।४।।

पर्वती नदी का जल जो निर्मल है, उसे भी हंस गंदा समझता है ।।५।।

सरस्वती के वाहन होने के कारण सुविख्यात सुबुद्धि के साधन को प्रेरित करता है ।।६।।

प्रेमी-प्रेमिका की विरह-गाथा को दूर से भी यह हंस सफलतापूर्वक ढोता है।।७।।

समग्रतया सुखदायक प्रकृति की रक्षा करें यह बात हंस सबको सूचित कर रहा है ।।८।।

सुन्दर शरीर वाला हो अथवा कुरूप हो, जो कुछ भी हो एकाएक हंस (प्राणपखेरू) छोड़ देता है ।।९।।

ooooo

(८५)

प्रकृतिसुभगमनघं शिशुवदनम् ।
सकलसुखदमतुलं शिशुवदनम् ।।१।।
स्मितविकसितमथ रोदनविकलम् ।
जननीरसजननं शिशुवदनम् ।।२।।
अलकाचितमम्बुदपरिवृतमिव ।
विधुविम्बं कम्रं शिशुवदनम् ।।३।।
अश्रुविमिश्रितलालाक्लिन्नम् ।
मातुरुपस्नवनं शिशुवदनम् ।।४।।
अस्फुटवचनं सहजसुहसनम् ।
बहुलानन्दकरं शिशुवदनम् ।।५।।
विकसितचलनयनं किलकिलमृदु ।
कर्षति कं न जनं शिशुवदनम् ।।६।।
कृतवामाङ्गुलि ललितकपोलम् ।
हसितमदनदर्पं शिशुवदनम् ।।७।।

भावार्थ - स्वभाव से सुन्दर निष्कलुष बच्चे का मुख होता है। सबों को सुख देने वाला अनुपम शिशु का मुख होता है ।।१।।

मुस्कान से विकसित अथवा रोने से विकृत बच्चे का मुख माँ के वात्सल्य को पैदा करने वाला होता है।।२।।

खुले बाल से व्याप्त मेघ से ढके चन्द्र की भाँति मनोहर बच्चे का चेहरा लगता है ।।३।।

आँसू से मिले हुए लार से भिगा हुआ बच्चे का चेहरा माँ के दूध को लाने वाला (पन्हानें वाला) होता है।।४।।

अस्पष्ट (तोतली) आवाज़, सहज ढंग से सुन्दर हँसना, इनसे युक्त शिशु का चेहरा अत्यन्त आनन्ददायक होता है ।।५।।

विकसित चंचल आँखों वाला किलकिलाहट से सुकोमल (सुमधुर) शिशु का मुख किसे नहीं आकर्षित करता ?।।६।।

बाँए हाथ की अंगुलि डाले हुए सुन्दर सुकोमल कपोल वाला शिशु का मुख कामदेव के सौन्दर्य के अहंकार को भी हँस रहा है ।।७।।

ooooo

(८६)

यामुने कूलदेशे स्थिता देहली ।
हर्म्यावलीदीपिता देहली ।।१।।
यानमानं प्रवक्तुं न शक्यं सखे ।
राजमार्गेष्वपि स्तम्भिता देहली ।।२।।
नागरं रेलयानं सुसौविध्यदम् ।
साधु तेनापि नो मापिता देहली ।।३।।
सर्वभागेभ्य आयान्ति लोका इह ।
अन्वहं तैरियं वर्धिता देहली ।।४।।
भारते हस्तिनापूरनाम्ना स्मृता ।
साम्प्रतं भारतस्यास्मिता देहली ।।५।।
विश्रुता नेहरूगान्धिका सर्वतो ।
राजमानेन्दिराशोभिता देहली ।।६।।

धर्ममार्गे धुरीणा सती साम्प्रतम् ।
अर्थसामर्थ्यसिद्धौ स्तुता देहली ।।७।।
विश्वबन्धुत्वसन्देशमालम्ब्य सा ।
विश्वमञ्चेऽतिसम्मानिता देहली ।।८।।
पार्श्वदेशोऽभ्यसूयापरो यो परः ।
तत्कृतेऽपि प्रशंसान्विता देहली ।।६।।

भावार्थ – यमुना के किनारे दिल्ली स्थित है । ऊँची अट्टालिकाओं की पंक्तियों से यह दिल्ली प्रकाशित है ।।१।।

हे मित्र ! वाहनों की गिनती यहाँ कही नहीं जा सकती। राजमार्गों पर (वाहनों के कारण) दिल्ली रुक सी जाती है ।।२।।

मेट्रो रेल अत्यन्त सुविधाप्रद है। किन्तु उससे भी ठीक तरह से पूरी दिल्ली नहीं मापी जा सकी है। अर्थात् पूरी दिल्ली में अभी मेट्रो रेल की सुविधा नहीं हो पाई है।।३।।

यहाँ सब भाग से लोग आते हैं, उनसे दिनानुदिन यह दिल्ली बढ़ गई है ।।४।।

महाभारत में यह हस्तिनापुर के नाम से वर्णित है। इस समय यह दिल्ली भारतवर्ष का गौरव है ।।५।।

सब ओर नेहरू और गाँधी के नाम से विख्यात हुई तथा इन्दिरा गाँधी के शासन से भी सुशोभित दिल्ली रही।।६।।

धर्म के मार्ग में अग्रसर रहकर यह दिल्ली इस समय अर्थ के विषय में प्रसिद्ध हो रही है ।।

विश्वबन्धुत्व सन्देश को लेकर वह दिल्ली विश्वमंच पर सम्मानिता हो चुकी है ।।८।।

बगल का शत्रु देश जो इसकी शत्रुता में लगा हुआ है, उसके लिए भी दिल्ली प्रशंसा से युक्त रहती है ।।६।।

ooooo

(८७)

कवलीकुरुते सकलं कालः ।

न कमपि सहते समदं कालः ।।१।।

अदितिसुतं दितिसुतमपि सबलम् ।

संहरतेऽसकृदुभयं कालः ।।२।।

सुविदितयशसं सुललितवपुषम् ।

कमपि न मुञ्चति सदयं कालः ।।३।।

कृतिनिरतोविश्राम्यति नक्तम् ।

न हि लभते विश्रामं कालः ।।४।।

गतचलदनागतादिकल्पनम् ।

सकलः कुरुते नायं कालः ।।५।।

दिनरजनीसुदिवदिमासाब्द-

क्रममुररीकुरुतेऽयं कालः ।।६।।

गगनचरं पातालगतं वा ।

निरीक्षते निखिलं तं कालः ।।७।।

गिरिमर्णवमर्णवमपि गिरिवर-

मनेकशः कुरुतेऽयं कालः ।।८।।

भावार्थ – काल सब को अपना ग्रास बना लेता है। यह काल अहंकारयुक्त किसी को भी सहन नहीं करता ।।१।।

अदिति सुत (आदित्य अर्थात् देवता) अथवा सबल दिति सुत (दैत्य) दोनों को बार-बार विनाश करता है।।२।।

दयायुक्त विख्यात कीर्तिमान् अथवा सुन्दर शरीरधारी किसी को भी नहीं छोड़ता ।।३।।

काम में लगा हुआ (व्यक्ति) रात को विश्राम करता है। किन्तु काल कभी भी विश्राम नहीं पाता ।।४।।

भूत, वर्तमान और भविष्य आदि की कल्पना सब जन करता, किन्तु यह काल नहीं। अर्थात् काल सदा एक या अखण्ड है ।।५।।

दिन, रात, शुक्ल पक्ष, कृष्ण पक्ष, मास तथा वर्ष का क्रम यह काल

स्वीकृत करता है ।।६।।

आकाश में विचरण करने वाले अथवा पाताल में गए हुए उस सबको काल देखता है ।।७।।

पर्वत को, समुद्र को भी गिरिवर अनेक बार यह काल करता रहता है ।।८।।

ooooo

(८८)

विलपति यमभगिनी कालिन्दी ।
श्रितकृतमलदिल्ली कालिन्दी ।।१।।
गिरिवरपतिता भुवि सर्पन्ती ।
मिलितराजधानी कालिन्दी ।।२।।
निजशुचिपुलिने कृतबहुवसति-
श्रमिकारण्यानी कालिन्दी ।।३।।
विदितनीलसलिला पुनरत्र च ।
सघनतमोरजनी कालिन्दी ।।४।।
बलहलहतिभीतेव हि जाता ।
मलभरलीनमुखी कालिन्दी ।।५।।
विपुलसेतुरिह समदं शेते ।
तेन विहितधरणी कालिन्दी ।।६।।
विशदभवन विम्बानपि सलिले ।
प्रकटयते न नदी कालिन्दी ।।७।।
हरिराधायुगलेन समं तट-
रासनिरतगोपी कालिन्दी ।।८।।

भावार्थ - यम की बहन कालिन्दी (यमुना) विलाप कर रही । यह यमुना दिल्ली की गन्दगी को धारण करती।।१।।

पर्वत से गिर कर जमीन पर बहती हुई राजधानी दिल्ली आकर यमुना मिलती है ।।२।।

अपने पवित्र किनारे पर अनेक प्रकार से अपना आवास बनाए हुए मज़दूरों का विशाल वन यह यमुना बन गई है ।।३।।

नीले जल से प्रसिद्ध यह यमुना यहाँ (दिल्ली) आकर पुनः सघन अन्धकार वाली रात की भाँति काली हो जाती है ।।४।।

बलराम के हल के प्रहार से डरी हुई मानो यह गन्दगी के बीच छुप कर अपना मुख काला कर लेती है।।५।।

विशाल पुल यहाँ गर्व के साथ बिछा है । उससे यह यमुना जमीन जैसी बना दी गई है ।।६।।

यह यमुना नदी अपने जल में विशाल भवनों के प्रतिबिम्बों को भी (गन्दगी के कारण) प्रकट नहीं कर पाती।।७।।

कृष्ण राधा की जोड़ी के साथ किनारे के उद्यान में रास (केलि क्रीड़ा) में लगी गोपिकाओं वाली कालिन्दी (इस समय भी) देखी जा सकती है ।।८।।

ooooo

(८६)

उपोषिता जनैर्धिया काशी ।
प्रियेत्यसेवि गङ्गया काशी ।।१।।
इहाप्तमृत्युरेति निर्वाणम् ।
ततोऽप्यनेकसेविता काशी ।।२।।
जनैःसमेत्य मन्दिरद्वारम् ।
सुघण्टया निनादिता काशी ।।३।।
गिरोनिकेतनानि सर्वत्र ।
सुपण्डितैश्च मण्डिता काशी ।।४।।
दशाश्वमेधमुख्यघट्टेषु ।
उषःकृतावगाहना काशी ।।५।।
प्रियं पवित्रजाह्नवं वारि ।
इहेति शम्भुसेविता काशी ।।६।।
बभौ पुरातनी कला यत्र ।
दधाति नूतनां च सा काशी ।।७।।

भावार्थ - लोग ज्ञान के लिए काशी वास करते हैं। गंगा ने प्रिय मानकर ही काशी की सेवा की । अर्थात् काशी होकर बहने लगी ।।१।।

यहाँ जो मृत्यु प्राप्त करता है वह मोक्ष पा लेता है, इसलिए अनेक लोगों द्वारा काशी सेवित होती है। अर्थात् अनेक लोग काशीवास करते हैं ।।२।।

लोग विश्वनाथ मन्दिर के द्वार पर इकट्ठा होकर सुन्दर घण्टा बजाते हैं इससे यह काशी गुंजित रहती है।।३।।

यहाँ सर्वत्र विद्यालय देखे जा सकते हैं सुन्दर सुयोग्य पण्डितों से यह काशी सुशोभित रहती है ।।४।।

दशाश्वमेघ आदि घाटों पर उषःकाल से सारे लोग गंगा-स्नान करते देखे जा सकते हैं, जिससे लगता है कि पूरी काशी उषःकाल में ही स्नान कर चुकी ।।५।।

पवित्र गंगा का जल शिवजी को अति प्रिय है यहाँ वह सुलभ है। अतः शम्भु (विश्वनाथ) के द्वारा काशी सेवित है ।।६।।

जिस काशी में प्राचीन कला ख्याति पा चुकी थी, वही काशी अभी नवीन कलाओं को भी धारण करती है।।७।।

ooooo

(६०)

हिमाद्रितुङ्गशृङ्गतोनिपत्य पावनं जलम् ।
द्रुतं सरज्जगत्पुनाति तद्धि जाह्नवं जलम् ।।१।।
नगाधिराजवर्त्ति भेषजप्रकर्षमुद्वहत् ।
करोति रोगमुक्तिमत्रवासिनामलं जलम् ।।२।।
पदे पदेऽस्य तीरदेशधर्मधामसङ्कुलम् ।
हरत्यशेषकल्मषं सरिद्वराऽमलं जलम् ।।३।।
तटस्थनागरं मलं दिवानिशं समुद्वहत् ।
प्रयाति मन्दमन्दमेतदर्णवं प्रियं जलम् ।।४।।
नगापगाप्रणालिकाम्बु सम्भवच्च गङ्गया ।
सदभ्युपैति सागरं प्रशस्यजाह्नवं जलम् ।।५।।

विसर्जितो महामदीषु कल्मषातिसञ्चयः।
ततोऽधुना न तत्र जानुदध्नमप्यलं जलम् ॥६॥
अपाकरोति कल्मषं पवित्रमातनोति यत् ।
ततोऽधुना नदीषु कल्मषैरपाकृतं जलम् ॥७॥

भावार्थ -हिमालय के ऊँचे शिखर से गिरकर पवित्र गंगा का जल तीव्र गति से चलता हुआ वह संसार को पवित्र करता है ॥१॥

पर्वतराज हिमालय पर स्थित औषधियों के गुण को ढोता हुआ वह जल यहाँ के निवासियों को काफी हद तक रोगमुक्त करता है ॥२॥

इसके स्थान-स्थान पर किनारे में धार्मिक स्थलों का फैलाव है। श्रेष्ठ नदी का निर्मल जल समस्त पापों को हरता है ॥३॥

किनारे के शहरों की गन्दगी को दिन-रात ढोता हुआ यह प्रिय जल धीरे-धीरे समुद्र को जाता है ॥४॥

पहाड़ी नदियों तथा नालों का जल गंगा से मिलकर सब गंगाजल बन जाता है और साथ-साथ सागर को प्राप्त करता है॥५॥

महानदियों में गन्दगी की ढेर विसर्जित होती है। इसलिये इस समय उन नदियों में घुटने भर भी पर्याप्त पानी नहीं रह पाता॥६॥

यह जल (गंगाजल) पाप को दूर करता है तथा पवित्र भी कर देता है। इसलिए आजकल नदियों में उन पापों (गन्दगी) के द्वारा जल ही दूर कर दिया गया ॥७॥

ooooo

(६१)

वाति हिमसम्पर्कशीतःशैशिरो वायुः ।
याति भानुगभस्तिभीतः शैशिरो वायुः ॥१॥
भानुमानागतः सौम्यायनं तं सद्यः ।
वारिदेनाछाद्य नीतः शैशिरो वायुः ॥२॥
गोकुलं कम्पतेऽद्यापि श्वापदाःखिन्नाः ।
शैत्यमादत्ते नदीतः शैशिरो वायुः ॥३॥
सद्रिकासच्छलेनोच्छेदितं गिरिगहनम् ।

एति नग्नवनावनीतः शैशिरो वायुः ।।४।।

आशिषं च निवासवत्यास्तत्र भगवत्याः ।

लाति नो विन्ध्याटवीतः शैशिरो वायुः ।।५।।

जायते धाराधुना पुलिनायमानेयम् ।

याति मौनं जाह्नवीतः शैशिरो वायुः ।।६।।

आपणेयाऽङ्गप्रदर्शं कुर्वती बाला ।

याति सद्यस्ततो भीतः शैशिरो वायुः ।।७।।

भावार्थ – शिशिर ऋतु की हवा बर्फ से होकर गुज़रने से ठंढी है। लगता है कि यह हवा सूर्य की किरणों से डरी हुई हो ।।१।।

सूर्य, सौम्यायन (उत्तर की ओर) आ गया है, उसे मेघ ने ढक दिया है उसी से होकर शिशिर ऋतु की हवा लाई गई है ।।२।।

गाय समूह काँप रहा है वन्य पशु पक्षी परेशान हैं। लगता है नदियों से शिशिर ऋतु की हवा शीतलता ले आती है ।।३।।

अच्छे विकास के बहाने गिरिगह्वर नष्ट कर दिया गया है। इसलिए खाली जंगल जमीन से होकर यह शिशिर ऋतु की हवा आ रही है ।।४।।

विन्ध्याचल के वन से, वहाँ निवास करने वाली भगवती दुर्गा का आशीर्वाद यह शिशिर की हवा (अब) नहीं ला पाती ।।५।।

यह गंगा नदी की धारा किनारे की भाँति ही केवल बालुकामय हो चुकी है। इसलिए चुपचाप गंगा नदी से होकर यह शिशिर की हवा गुज़र रही है ।।६।।

बाज़ार में अपना अंग प्रदर्शन युवती करती होती है लगता सद्यः उससे डरी हुई शिशिर की हवा लगती है।।७।।

ooooo

(६२)

वनं मण्डयते वसन्तः ।

मनो मोदयते वसन्तः ।।१।।

कोकिलाकूजितं हृदयं ।

मृदु निवेदयते वसन्तः ।।२।।

किसलयेनाच्छाद्य विपिनम् ।

मदनमनुनयते वसन्तः ।।३।।

कामिनामुद्बोधनं ननु ।

अलिरुतैः कुरुते वसन्तः ।।४।।

विकसदब्जवनेन शुभ्रं ।

सरो भूषयते वसन्तः ।।५।।

रसालं शुभमञ्जरीभिः ।

अलमलङ्कुरुते वसन्तः ।।६।।

पुष्पितैः सर्षपैरवनीम् ।

नटीं लम्भयते वसन्तः ।।७।।

काञ्चनाभं वपुः सख्याः ।

उन्मदं तनुते वसन्तः ।।८।।

शोभनं च समोष्णशीतम् ।

समयमातनुते वसन्तः।। ९।।

भावार्थ - वसन्त ऋतु वन को सजाता है। वसन्त मन को प्रफुल्लित करता है ।।१।।

वसन्त कोयल की मनोहर कूक को बड़ी कोमलता से निवेदित करता है ।।२।।

वसन्त कोमल नव पल्लव से वन को आच्छादित कर मानो कामदेव को मना रहा है ।।३।।

भ्रमर के गुंजनों से वसन्त मानो कामीजन को जगा रहा है।।४।।

वसन्त खिलते हुए कमल वन से स्वच्छ सरोवर को अलंकृत कर रहा है ।।५।।

वसन्त नई मंजरियों से आम वृक्ष को बहुत अधिक सुशोभित कर रहा है ।।६।।

वसन्त सरसों के फूलों से धरती को नटी बना रहा है।।७।।

नायिका के स्वर्णिम शरीर को वसन्त मदमस्त कर रहा है।।८।।

वसन्त समान गर्मी और ठंढी लाकर समय को मनोहर बना रहा है ।।६।।

०००००

(६३)

त्वया सञ्चितं तद्धनं कस्य हेतोः ।
सखेऽहर्निशं धावनं कस्य हेतोः ।।१।
यदेवार्जितं चातिदुःखेन किञ्चित् ।
तदाख्यानकं जल्पनं कस्य हेतोः ।।२।
यथाशक्ति पैशुन्यमालम्बसे त्वम् ।
स्वसम्यग्धियः कीर्त्तनं कस्य हेतोः ।।३।।
सुशान्तिक्षमाज्ञानदानार्द्रचित्ते ।
रिपुश्चेदुदग्रो बलं कस्य हेतोः ।।४।।
प्रचण्डे दुराचारशीले कुपुत्रे ।
वसत्यन्तिके चेद् विषं कस्य हेतोः ।।५।।
भयं क्रोध आलस्यमुन्मत्तचित्तम् ।
अधर्मे रुचिश्चेच्छ्रुतं कस्य हेतोः ।।६।।
असत्यं वचः सङ्गति दुर्जनेन ।
कुमार्गे गतिर्वन्दनं कस्य हेतोः ।।७।।
विनम्रे सदाचारशीले सुपुत्रे ।
सुविद्यावदातेऽर्जनं कस्य हेतोः ।।८।।
स्वचित्ते शुभे चण्डिकानाम्नि सिद्धे ।
ततो मुक्तये चिन्तनं कस्य हेतोः ।।९।।

भावार्थ – हे मित्र ! तुमने किसलिए वह धन इकट्ठा किया है। दिन-रात किसलिए दौड़ रहे हो ? ।।१।।

अत्यन्त कष्ट से जो कुछ भी तूने अर्जित किया है, उसको प्रदर्शित करने

के लिए इतना ढकते क्यों हो ।।२।।

जितनी बन पड़ती उतनी कुटिलता या बेईमानी का सहारा लेते हो, तो अपनी सुबुद्धि का बखान किसलिए करते हो ।।३।।

सुशान्ति, क्षमाशीलता, ज्ञान तथा दान आदि सद्‌गुणों से जिसका हृदय पिघला रहता, तो फिर प्रबल शत्रु भी हो तो, उसे बल किसलिए ? अर्थात् ऐसे व्यक्ति के सामने प्रबल शत्रु कुछ नहीं बिगाड़ सकता है ।।४।।

प्रचण्ड, दुराचारी कुपुत्र के समीप में रहते विष की क्या आवश्यकता अर्थात् ऐसे ही पुत्र कभी भी जान का ग्राहक बन जाता है ।।५।।

भय, क्रोध, आलस्य, उन्माद से युक्त चित्त तथा अधर्म या पाप में यदि रुचि हो तो फिर शास्त्र का ज्ञान किसलिए ? अर्थात् ऐसी स्थिति में शास्त्र का ज्ञान बेकार है ।।६।।

असत्य वाणी (झूठ), दुर्जन के साथ संगति कुमार्ग पर प्रवृत्ति यदि है तो फिर वन्दना किसलिए ? ।।७।।

विनम्र, सदाचारी, सुन्दर विद्या से चमकते चेहरे वाले सुपुत्र के होते धन अर्जन किसलिए ? ।।८।।

अपने हृदय में माँ चण्डिका के नाम को सिद्ध कर लेने पर फिर मुक्ति के लिए चिन्तन किसलिए ? ।।९।।

ooooo

(६४)

सञ्चिनोति कणमयं वराकः ।
लुण्ठतिकोऽप्यतिधनं वराकः ।।१।।
कर्षति हलं बीजमथ निवपति ।
शस्यमवति सश्रमं वराकः ।।२।।
समदमनुभवन् जीवनसुखमिह ।
कोऽपि हरति बहुफलं वराकः ।।३।।
खादति भोजयते च कुटुम्बम् ।
अतिथिमर्चयति सुखं वराकः ।।४।।

अपहृतधनमिह रक्षति तत्र च ।
छलयति जनगणमलं वराकः ।।५।।
श्रमकर्मसु शोणितमपकुरुते ।
स्वेदमनल्पं चलं वराकः ।।६।।
वातनियन्त्रितभवनयानसुख- ।
मुपभुङ्क्ते प्रतिपलं वराकः ।।७।।
वर्णधर्मशोषणमाचरितम् ।
पुरेति निन्दति भृशं वराकः ।।८।।
किमिदानीं तच्छलेन निर्धन-
मतितुदति प्रत्यहं वराकः ? ।।९।।

भावार्थ - यह बेचारा दाना चुनता है। किन्तु कोई तो अतिशय धन लूट रहा है ।।१।।

कोई बेचारा हल जोतता है, बीज बोता है, तथा परिश्रम से फसल की रक्षा करता है ।।२।।

कोई तो यहाँ गर्व के साथ जीवन सुखकर अनुभव करता हुआ बहुत सा फल हर लेता है ।।३।।

कोई बेचारा स्वयं खाता है, परिवार का भरण-पोषण करता, अतिथि की सेवा आनन्द के साथ करता है ।।४।।

कोई तो धन का अपहरण कर यहाँ (देश में) तथा वहाँ (विदेश में भी छुपा कर) रखता है और जनता को काफी ठगता है ।।५।।

कोई बेचारा मिहनत के कामों में खून बहाता है तथा काफी पसीना चुआता है ।।६।।

कोई तो वातानुकूलित घर तथा गाड़ी का सुख हरपल भोगता है ।।७।।

"पहले जाति और धर्म के माध्यम से बहुत शोषण कुछ लोगों ने किया है" इस तरह कोई बहुत निन्दा करता है ।।८।।

आजकल हर रोज इसके बहाने गरीब को क्या परेशान नहीं करता ? ।।९।।

ooooo

(६५)

मोदयसे मुहुरभिनवमोहन ।
सुखयति जनिरधिकं तव मोहन ॥१॥
तारयसे दुःखाब्धिनिमग्नम् ।
सन्त्राता ननु मम भव मोहन ॥२॥
रिपुततिविपिनविषण्णमनाथम् ।
तारय खलदलवनदवमोहन ॥३॥
दुरितजातपरिगतमुन्मदमपि ।
जनमुद्धारय यादव मोहन ॥४॥
अन्नाद्भूतजातमिह भवति ।
इमां विनाप्यन्नामव मोहन ॥५॥
करुणार्णव इतिविदितोऽपि त्वम् ।
दयसे किं न रमाधव मोहन ॥६॥
कारावन्धनमनलं जातम् ।
जननमवाधितमिह तव मोहन ॥७॥
कंसकुटिलमातुलमुन्मथितुम् ।
भवसि कुलिशमिव माधव मोहन ॥८॥
कलिमलकलुषितमथ भारतमपि ।
त्रातुं साधु पुनर्भव मोहन ॥९॥

भावार्थ - हे अभिनव मोहन (बालकृष्ण) तुम बार-बार आनन्दित करते हो। (कृष्ण रूप में) तेरा अवतार अतिशय सुख प्रदान करता है ।।१।।

हे मोहन ! दुःखरूप समुद्र में निमग्न जन का उद्धार करते हो। अतः मेरा भी रक्षक बनो ।।२।।

हे मोहन ! शत्रु समूह रूप जंगल में विषाद युक्त अनाथ मुझे, शत्रुदल वन के दावाग्नि रूप तुम उद्धार करो।।३।।

हे यादव, हे मोहन ! पाप समूह से व्याप्त, उन्मत्त जन को भी (मुझे भी) उद्धार करो ।।४।।

यहाँ अन्न से जीव समूह उत्पन्न होता है, इसके बिना भी तुम इस धरती की रक्षा करो ।।५।।

हे रमापति मोहन ! तुम करुणा के सागर हो यह विदित है, तो फिर दया क्यों नहीं करते ।।६।।

हे मोहन ! यहाँ (कृष्णावतार के समय) कारावास का बन्धन भी बेकार हो गया तथा तेरा जन्म बाधा रहित सम्पन्न हुआ ।।७।।

हे माधव हे मोहन ! तेरा मामा कंस अत्यन्त कुटिल था, उसका नाश करने के लिए तुम वज्र की तरह कठोर बन गये।।८।।

हे मोहन ! कलियुग के दोष से कलुषित इस भारत देश की भी रक्षा के लिए पुनः अवतार लो ।।९।।

ooooo

(६६)

गर्जति तथ्यं कोऽपि वराकः ।
जरन्नयं क्षुधितोऽपि वराकः ।।१।।
सिंहासनमतिकम्पमानमिव ।
विचलति नैव ततोऽपि वराकः ।।२।।
जनगणमुद्वेजयति सर्वतः ।
एकत्रासीनोऽपि वराकः ।।३।।
व्रतमाचरति सकलहितसिद्धयै ।
त्यजति किमनुनीतोऽपि वराकः ? ।।४।।
धनबलपदमदविह्वलचित्तान् ।
जागरयति नो सोऽपि वराकः ।।५।।
चत्वरगह्वरगोष्ठगुहास्वपि ।
असन्नस्ति मनुजोऽपि वराकः ।।६।।
किमहिशयनमच्युतमिव गाढम् ।
बोधयिता विनतोऽपि वराकः ? ।।७।।

भावार्थ - कोई बेचारा सही बात का गर्जन कर रहा है। भूखा रहकर भी यह बूढ़ा बेचारा ऐसा कर रहा है ।।१।।

सिंहासन यहाँ अत्यन्त काँप रहा है, फिर भी यह आदमी (अन्ना हजारे) विचलित नहीं होता ।।२।।

एक जगह बैठकर भी यह सब ओर जनसमूह को आन्दोलित कर रहा है।।३।।

सबके हित की सिद्धि के लिए यह उपवास कर रहा है। अनुनय विनय करने पर भी क्या है अपना व्रत तोड़ता है ?।।४।।

धन के बल और पद के घमण्ड से उन्मत्त चित्त वाले लोगों को वह फिर भी नहीं जगा पा रहा है ।।५।।

मनुष्य होता हुआ भी वह चौराहे पर घरों में गोष्ठियों में गुफाओं में नहीं होता हुआ भी है ।।६।।

क्या यह विनयशील बेचारा सर्पशय्या पर गाढ निद्रा में सोये विष्णु की भाँति सत्तासीन जन को जगा पायेगा ?।।७।।

ooooo

(६७)

जरन्नकोपि सत्यं वदत्यद्य सद्यः ।
युवानोऽनुवादं ददत्यद्य सद्यः ।।१।।
विरुध्यन्ति सङ्कल्पमेतस्य केचित् ।
विलोक्येति कश्चिद् हसत्यद्य सद्यः ।।२।।
धनं नो प्रभुत्वं न तारुण्यमुग्रम् ।
इति व्यक्ति रेषाऽऽलपत्यद्य सद्यः ।।३।।
नवे सुप्रभातेऽपि जागृष्व बन्धो ।
प्रबुद्धो हि मन्त्रं जपत्यद्य सद्यः ।।४।।
सदा येऽवकाशं निजग्रासहेतोः ।
उपेत्य प्रमोदं दधत्यद्य सद्यः ।।५।।
समत्स्येषु ते पल्वलेषु प्रसन्नाः ।
बका आमिषाशं जहत्यद्य सद्यः ।।६।।
कुतर्कं वितर्कं सुतर्कं समग्रम् ।
विहायैष चाग्रे सरत्यद्य सद्यः ।।७।।

नयो नूतनो नीयतामाशु मान्यः ।
समत्वं समन्ताद् भवेदद्य सद्यः ।।८।।

भावार्थ – कोई बूढ़ा आज साक्षात् सत्य बोल रहा है, और आज साक्षात् युवक लोग भी उसको दोहरा रहे हैं ।।१।।

कुछ लोग (उस बूढ़े के) संकल्प का विरोध कर रहे हैं, यह देख कोई आज सीधे हँस रहा है ।।२।।

(उस बूढ़े के पास) न धन है न प्रभुता है न उग्र युवावस्था है, यह कोई व्यक्ति आज सीधे बोल रहा है।।३।।

हे बन्धु ! नये सुप्रभात में भी जागो । जगा हुआ यह आदमी आज सद्यः मंत्र जाप कर रहा है ।।४।।

अपने ग्रास के लिए जो हमेशा मौका पाकर सद्यः आज खुश हो रहे हैं ।।५।।

वे बगुले आज मछलीयुक्त गड्ढों में भी सीधे आमिष भोजन छोड़ रहे हैं ।।६।।

कुतर्क, वितर्क, सुतर्क सब छोड़कर यह आज सीधे आगे बढ़ रहा है ।।७।।

सर्वमान्य शीघ्र नया कानून लाएँ जिससे सब ओर समानता आज साक्षात् कायम हो सके ।।८।।

ooooo

(६८)

तुदत्यलं यथा निजं दुःखम् ।
सखे तथा न तावकं दुःखम् ।।१।।
धनाभिमानिनं तथा दीनम् ।
दुनोत्यसंशयं द्वयं दुःखम् ।।२।।
धिया विहीन एव न प्रायो ।
लभेत पण्डितोप्यलं दुःखम् ।।३।।

प्रियं सुपथ्यपुष्टिदं भोज्यम् ।
अजीर्णभोजने परं दुःखम् ।।४।।
कुपथ्यकुत्सितं विसृष्टान्नम् ।
बुभुक्षितोऽयमत्यलं दुःखम् ।।५।।
धनेश एष एति पर्यङ्के ।
महार्हशय्याऽधिकं दुःखम् ।।६।।
विनापि शय्यया शयानोऽयम् ।
सुखं परैति कश्मलं दुःखम् ।।७।।
विमृश्य सत् परं विजिज्ञासुः ।
जगद् ब्रवीत्यनुत्तमं दुःखम् ।।८।।
मृतिः सुदुःखदाऽस्ति सर्वत्र ।
क्वचिच्च जन्मसम्भवं दुःखम् ।।९।।
पदोन्नतिं समीक्ष्य किं बन्धो !
उदेति तेऽतिमानसं दुःखम् ।।१०।।
प्रियाकटाक्षवाणविद्धानाम् ।
मनःसु शूलमद्भुतं दुःखम् ।।११।।
सुखानुभूतिमेत्य यद् दैन्यम् ।
जनोऽश्नुते तदद्वयं दुःखम् ।।१२।।
यदात्मवेदनप्रतीपं तत् ।
समासतो बुधै र्मतं दुःखम् ।।१३।।

भावार्थ –जैसे अपना दुःख सताता है, हे मित्र! उस तरह तेरा दुःख नहीं सताता ।।१।।

धन का अहंकार वाले तथा गरीब दोनों को निश्चय ही दुःख सताता है ।।२।।

केवल प्रायः बुद्धिहीन ही नहीं, अपितु पण्डित भी पर्याप्त दुःख प्राप्त करते हैं ।।३।।

अच्छे, सुपथ्य पुष्टिदायक भोजन भी अजीर्ण भोजन होने पर अत्यन्त दुःखदायक है ।।४।।

कुपथ्य निन्दित जूठा अन्न भी भूखा आदमी खाता है, यह पर्याप्त दुःख की बात है ।।५।।

धन स्वामी यह पलंग पर कीमती बिछौने से भी अधिक दुःख पाता है ।।६।।

बिना बिछावन सोया हुआ यह सुख पाता है, यह दैन्य का दुःख है ।।७।।

परम सत्ता का जिज्ञासु पण्डित (दार्शनिक) विचार कर कहता है कि यह संसार सबसे बड़ा दुःख है ।।८।।

सब जगह मृत्यु अत्यन्त दुःखद मानी गई है, किन्तु कहीं जन्म होने से भी दुःख होता है ।।९।।

(आजकल समाज में एकाधिक लड़की का जन्म दुःख का कारण होता है, जो अच्छी बात नहीं है।)

हे बन्धु ! दूसरे की उन्नति देखकर तेरा मानसिक दुःख क्यों होता है ।।१०।।

प्रियतमा के कटाक्ष रूपी बाण से विद्ध जनों के हृदयों में जो चुभन होता है वह अद्भुत दुःख है ।।११।।

सुख का अनुभव करने के बाद जो गरीबी होती, वह अद्वितीय दुःख आदमी भोगता है ।।१२।।

जो आत्म वेदना का प्रतिकूल हो, संक्षेप में पण्डितों ने उसे ही दुःख कहा है।।१३।।

ooooo

(६६)

सगर्वः समायाति हेमन्तवातः ।
हिमानी प्रियो भाति हेमन्तवातः ।।१।।
सहस्रांशुरश्मीन् तिरस्कृत्य सद्यः ।

प्रगल्भोऽयमाभाति हेमन्तवातः ॥२॥

हिमाद्रिप्रयातः प्रकामं प्रसन्नः ।
जडत्वं हि पुष्णाति हेमन्तवातः ॥३॥

नदीं वाऽथ वापीं समासाद्य तस्याः ।
सुशैत्यं दधद्वाति हेमन्तवातः ॥४॥

पिधायाखिलं वर्ष्म सुप्तस्य सख्यम् ।
हठादद्य गृह्णाति हेमन्तवातः ॥५॥

प्रभूताङ्गनाङ्गानि नग्नानि वीक्ष्य ।
समाच्छादनं लाति हेमन्तवातः ॥६॥

कुटीरे गृहे मन्दिरे मस्ज़िदे वा ।
सुहर्म्ये समं वाति हेमन्तवातः ॥७॥

तिरस्कृत्य तं यो बलं व्यातनोति ।
असून् तस्य मुष्णाति हेमन्तवातः ॥८॥

प्रियायाः प्रियप्रेम मानाहतं यत् ।
दृढं तद्धि बध्नाति हेमन्तवातः ॥९॥

जरद्बालबालाऽबलावीरजातम्
पशूंश्चापि क्लिश्नाति हेमन्तवातः ॥१०॥

वियोगाकुलाऽऽस्ते निशीथे नवोदा
मुधा तां हि मथ्नाति हेमन्तवातः ॥

न वित्तं न वर्णं कुलं वापि धर्मं ।
न जातिं विजानाति हेमन्तवातः ॥

भावार्थ - बड़े गर्व के साथ हेमन्त ऋतु की हवा आ रही है। यह हेमन्तवात अतिशय बर्फीला है ॥१॥

सूर्य किरणों का सद्यः तिरस्कार कर यह हेमन्तवात अति प्रबल प्रतीत हो रहा है ॥२॥

हिमालय से निकला हुआ यह हेमन्त वात अति प्रसन्न है तथा ठंढक पुष्ट कर रहा है ॥३॥

नदी अथवा सरोवर को पाकर उससे अत्यन्त ठंढक धारण करता हुआ यह हेमन्तवात बह रहा है ।।४।।

सारे अंगों को ढककर सोये हुए व्यक्ति की मित्रता आज जबर्दस्ती यह हेमन्तवात ग्रहण कर लेता है। अर्थात् ढके हुए शरीर से भी किसी तरह जा मिलता है, उसे भी जाड़े का अनुभव करा देता है ।।५।।

उनके लिए नारियों के अंग (आजकल) अत्यन्त नंगे होते हैं, मानो हेमन्तवात सही आवरण ले आता है और हेमन्त की बर्फीली हवा के कारण नारियाँ अपने अंगों को सही ढंग से ढककर ही जाड़े से बच पाती है । कम ठंढी में तो न्यूनतम वस्त्रों से ही काम चला लेती है, जिससे अंग प्रदर्शन में बाधा न हो ।।६।।

. कुटी में, घर में, मन्दिर में, मस्ज़िद में या सुन्दर महल में समान रूप से यह हेमन्त की हवा बहती है । अर्थात् हेमन्तवात जाति, धर्म या वर्ग पर विचार किए बिना बहता है ।।७।।

उसका (हेमन्तवात का) तिरस्कार कर जो अपना बल बढ़ाता फिरता है उसके प्राणों को ही हेमन्तवात चुरा लेता है। अर्थात् हेमन्त की बर्फीली हवा का परवाह किए बिना जो व्यक्ति अपना बल प्रदर्शित करता है ऐसे किसी बलशाली की भी जान हेमन्त की हवा ले सकती है ।।८।।

प्रियतमा का अपने प्रियतम से प्रेम यदि मान के कारण व्याहत हो जाता है, उसे वह बर्फीली हवा बड़ी मज़बूती से मिला देती है । अर्थात् प्रेमी-प्रेमिका यदि एक दूसरे से रूठे होते हैं, उन्हें भी आपस में आलिंगनादि के लिए मज़बूर कर देती है। इस तरह दोनों प्रेमी-प्रेमिका को प्रेमपाश में दृढता से बांध देती है।।६।।

बूढ़े, बच्चे, बच्चियाँ नारी, वीरपुरुष तथा जानवरों को भी हेमन्तवात क्लेश पहुँचाता है ।।१०।।

रात को नवविवाहिता अपने प्रियतम के वियोग में व्याकुल होती, उसे भी बेकार हेमन्तवात परेशान करता है। अर्थात् उस पर भी दया नहीं करता ।।११।।

यह हेमन्तवात न धन, न रूप, न खानदान, न धर्म, न जाति को भी जानता है ।।१२।।

ooooo

जालकलुषितमिदं विश्वम् ।
कालकवलितमिदं विश्वम् ।।१।।
कोकिलाकूजितं विरलम् ।
काकवधिरितमिदं विश्वम् ।।२।।
t kह्नवीजलमलं मलिनम् ।
मधुपिपासितमिदं विश्वम् ।।३।।
हेममोहितमखिलमधुना ।
प्रेमविधुरितमिदं विश्वम् ।।४।।
दम्भदलितं दीनवृन्दम् ।
दानवर्जितमिदं विश्वम् ।।५।।
दुर्जनार्जितमाधिपत्यम् ।
साधुविहसितमिदं विश्वम् ।।६।।
हंसकारण्डवविरहितम् ।
बकव्याहतमिदं विश्वम् ।।७।।
रामवर्जितमतिविमुग्धम् ।
कामनर्तितमिदं विश्वम् ।।८।।
कृष्णगीतामृतमपथ्यम् ।
कंसमर्दितमिदं विश्वम् ।।९।।
पारलौकिकभयमवसितम् ।
वञ्चनारतमिदं विश्वम् ।।१०।।
जीवनं वत मानवीयम् ।
वेत्त्यकिञ्चनमिदं विश्वम् ।।११।।
आत्मविध्वंसकविधानैः ।
ज्ञानगर्वितमिदं विश्वम् ।।१२।।

भावार्थ - जाल फरेब से अथवा विषाक्त आणविक आदि किरणों के जाल से यह विश्व कलुषित है। लगता है कि इस विश्व को काल ने अपना ग्रास बना लिया ।।१।।

कोयलों की कूक विरल हो चुकी है, किन्तु कौओं के कोलाहल से यह विश्व बहरा हो गया है ।।२।।

गंगा का जल अत्यन्त गंदा हो गया अर्थात् उसे गंदा मानकर लोग अनादर करते हैं। किन्तु यह विश्व मदिरा का प्यासा हो गया है ।।३।।

सोने से (धन-सम्पत्ति) सब इस समय मोहित हैं, किन्तु प्रेम से वंचित यह विश्व हो गया है ।।४।।

(वैभव सम्पन्न जन के) अहंकार से गरीब लोग पीड़ित हैं। यह विश्व दान से रहित हो चुका है ।।५।।

दुर्जनों के द्वारा राजसत्ता अधिकृत है, सज्जन इसे देखकर इस विश्व का उपहास करते हैं ।।६।।

हंस बत्तख आदि से हीन यह विश्व बगुलों से व्याहत है।।७।।

राम से वंचित अत्यन्त मुग्ध यह विश्व कामवासना से नाच रहा है ।।८।।

कृष्ण की गीता अत्यन्त वर्जित हो गई है, कंस रूप दुष्टों के द्वारा यह विश्व पीड़ित है ।।६।।

परलोक का भय समाप्त हो गया है। ठगी में लीन यह विश्व कुछ नहीं समझता है (अर्थात् यत्र तत्र हत्याएँ हो जाती हैं)।।१०।।

आह! मानव जीवन को यह विश्व कुछ नहीं समझता है ।।११।।

अपने आपको (विश्व स्वयं को) नष्ट कर देने वाले आणविक अस्त्रादि के निर्माण कर लेने के कारण यह विश्व अपने ज्ञान के गौरव में दिख रहा है ।।१२।।

ooooo

(१०१)

वर्षति वारिद उदधितरङ्गे ।
नातपमर्दितकृषिभूभङ्गे ।।१।।
वैभवचर्चितनाम्नि जने बहु ।
वर्षति धनमिव नैव तु रङ्के ।।२।।

प्रावृषि दुर्दिनमपि सुखमधिकम् ।
आतनुते ननु दयितासङ्गे ।।३।।
श्रावणमासि पथिकवनितानाम् ।
सङ्गमकारिणि कुप्यदनङ्गे ।।४।।
शुष्यतु भूमितलं कृषकाणाम् ।
नो दयते किमु तृषितपतङ्गे ।।५।।
शून्यगृहं ह्यबलाऽधिवसन्ती ।
इत्यभयं सर्पति च भुजङ्गे ।।६।।
शुष्कजलामुपगतवति किं न हि
वर्षसि वारिद सेवितगङ्गे ।।७।।
वारिलवं विपिनेऽभ्रनटोऽयम् ।
विकिरति रसमिव नागररङ्गे ।।८।।
क्षीणनदी रमणीव वियुक्ता ।
मुञ्चतु केन च कृशतामङ्गे ।।६।।

भावार्थ - मेघ समुद्र के तरंग पर बरसता है, किन्तु गर्मी से तपी हुई खेती की जमीन की दरार पर नहीं बरसता है।।१।।

धन-सम्पत्ति के कारण विख्यात नाम वाले व्यक्ति के ऊपर जैसे बहुत धन बरसता, किन्तु गरीब के ऊपर नहीं, उसी तरह मेघ बरसता है ।।२।।

वर्षाकाल में दुर्दिन भी (मेघ से व्याप्त आसमान वाला दिन) निश्चय ही प्रियतमा के संग अतिशय सुख प्रदान करता है ।।३।।

वियोगिनी नायिकाओं को अपने प्रियतमों से संगम कराने वाले काम के कुपित होने पर सावन के महीने में मेघ बरसता है।।४।।

किसानों की जमीन सूखे तो सूखे, किन्तु प्यासे पक्षी पर मेघ दया क्यों नहीं करता ।।५।।

सूने घर में अबला नायिका निवास करती है इसलिए निर्भय होकर कुटिल कामी ससरकर मेघ बरसने पर घुस जाता है।।६।।

हे मेघ, सूखी नदी के समीप गये हुए (रहने वाले) जन पर क्यों नहीं बरसते, किन्तु जो जन गंगा आदि महानदी का सेवन करता है अर्थात् जहाँ जल का अभाव नहीं है उस पर बरसते हो।।७।।

मेघ रूप नट वन में जलविन्दु उसी तरह बिखेर रहा है जैसे नट (नर्त्तक कलाकार आदि) नगरवासियों के रंगमंच पर रस (शृङ्गारादि रस) बिखेरता हो ।।८।।

वियोगिनी नायिका की तरह क्षीण नदी अपने अंग की दुर्बलता किस प्रकार छोड़े, उस तरह का काम मेघ करे।।९।।

ooooo

(१०२)

सुजनमनोज्ञमिदं मधुचषकम् ।
नवरसरुचिरमिदं मधुचषकम् ।।१।।
दयिताधरदलमिव रमणीयम् ।
युवजनकमनीयं मधुचषकम् ।।२।।
शंसति शिरसि निधाय च नृत्यति ।
प्रणमति कश्चिदिदं मधुचषकम् ।।३।।
प्रियाविलपनं शिशुरोदनमपि
वेत्ति न किमपीदं मधुचषकम् ।।४।।
क्रूरसबलदुर्मदखलदलमपि ।
मनुते तुच्छमिदं मधुचषकम् ।।५।।
अरुणितनयनोऽयं बहु गर्जति ।
अनासाद्य नियतं मधुचषकम् ।।६।।
पूतिगन्धिकृमिचितं शुनापि च ।
लीढं स्वदतेऽयं मधुचषकम् ।।७।।
प्रबलवीचिसरिदुदके मग्नम् ।
अवति निपीय अयं मधुचषकम् ।।८।।
रहसि कम्पते काचिदन्तिकम् ।

वीक्ष्य पिबन्तमिदं मधुचषकम् ॥९॥
विस्मरति प्रियमप्रियमखिलम् ।
अटति निपीय वनं मधुचषकम् ॥१०॥

भावार्थ – मदिरा का प्याला बड़े लोग का अति प्रिय होता है। मदिरा का प्याला अभिनव रस या नौ प्रकार के रसों से मनोहर या सुन्दर होता है ॥१॥

प्रियतमा के अधरदल की तरह रमणीय युवाओं को मनोनुकूल मदिरा का प्याला होता है ॥२॥ (शृङ्गार)

कोई इसकी प्रशंसा करता है, माथे पर रखकर नाचता है तथा इस मदिरा के प्याला को प्रणाम करता है ॥३॥ (हास्य)

यह मदिरा का प्याला बच्चे का रोना, पत्नी का बिलखना भी नहीं जानता ॥४॥ (करुण)

क्रूर, प्रबल, घमण्डी दुश्मनों के पक्ष को भी यह मदिरा का प्याला तुच्छ मानता है ॥५॥ (वीर)

निर्धारित मदिरा का प्याला नहीं मिलने पर यह आदमी आँख लाल कर बहुत गरजता है ॥६॥ (रौद्र)

समीप में इस मदिरा के प्याला को पीते हुए आदमी को एकान्त में देखकर कोई बाला काँप उठती है ॥७॥ (भयानक)

सड़े हुए दुर्गन्ध युक्त कीड़े से भरा हुआ तथा कुत्ते से भी चाटे गये मदिरा के प्याला को (यह आदमी) बड़े चाव से पीता है ॥८॥ (बीभत्स)

बड़े विशाल तरङ्ग वाले नदी जल में डूबे हुए को यह व्यक्ति मदिरा का प्याला पी बचा लेता है ॥९॥ (अद्भुत)

मदिरा के प्याला को पीकर (कोई व्यक्ति) अच्छा-बुरा सब को भुलाकर जंगल में भटकता है ॥१०॥ (शान्त)

ooooo

(१०३)

जानकीजानये स्यान्नमोऽहर्निशम् ।
पातकात्पातु मां राघवोऽहर्निशम् ॥१॥
वैभवेनावलिप्तान् सुभार्यानपि ।

काञ्चनं कामिनी कर्षतोऽहर्निशम् ।।२।।
रामवाणहतोऽपिप्रभूतोन्मदो ।
मद्हृदन्तऽर्गतो रावणोऽहर्निशम् ।।३।।
ज्ञानदीपप्रभालोकितं चापि किं ।
बाधते मां मदन्तस्तमोऽहर्निशम् ।।४।।
बाघते किं स कल्माष आदीनवो ।
भक्तिगङ्गाभिषिक्तान् सतोऽहर्निशम् ।।५।।
पङ्कजं भाति शारद्यमेवाहनि ।
काय आलेश्च पद्मोपमोऽहर्निशम् ।। ६।।
रामरामेति मन्त्रं महान्तं मुदा ।
जीवनं यातु मे जल्पतोऽहर्निशम् ।।७।।

भावार्थ - जानकीनाथ श्रीराम को दिन रात (मेरा) नमस्कार हो। राघव मुझे दिन रात पाप से रक्षा करें ।।१।।

धन-सम्पत्ति के घमण्ड के चूर तथा सुन्दर पत्नियों से युक्त लोगों को भी कांचन (सोना) तथा कामिनी आकर्षित करती है ।।२।।

राम के बाण से रावण के मारे जाने पर भी मेरे हृदय के अन्तर्गत विराजमान रावण अत्यन्त उन्मत्त है ।।३।।

ज्ञान (आधुनिक विद्या) के प्रकाश से आलोकित होने पर भी क्यों मुझे अन्तःकरण का अन्धकार दिन-रात बाधित करता है।।४।।

वह दैन्य आदि पाप भक्तिरूपी गंगा में नहाए हुए सन्तजनों को भी क्यों बाधित करता है ? ।।५।।

शरद् ऋतु का कमल भी केवल दिन में ही सुशोभित होता है। किन्त सखी (नायिका) का कमल के समान शरीर दिन-रात शोभित होता है ।।६।।

"राम राम" इस महामंत्र को प्रेम से दिन-रात जपते हुए मेरा जीवन गुजरे ।।७।।

ooooo



लेखक परिचय



डॉ. महेश झा का जन्म 4 फरवरी 1946 ई० में ग्राम पोस्ट पस्टन भाया गनौली जिला मधुबनी, बिहार में हुआ। इनकी माता का नाम श्रीमती भगवती देवी व पिता का नाम श्री वासुदेव झा था। श्री झा जी छात्र जीवन से ही अध्यवसायी रहे हैं तथा कविता व पद्‌य की रचना करना प्रारंभ कर दिए थे। अपनी मेधा के कारण 1985 में रीडर, 1990 में प्रोफेसर व 2003 में विभागाध्यक्ष बने। 28/02/2006 को भागलपुर विश्वविद्यालय से संस्कृत के विभागाध्यक्ष के पद से सेवानिवृत हुए। श्रीमती देवकला झा द्वारा जीवनसंगिनी के रूप में श्री झा जी का प्रायः उत्साहवर्धन किया जाता रहा जिसके परिणामस्वरूप सुललित पद्‌यावली का निरंतर सृजन होता रहा। मातास्वरूपा श्रीमती देवकला झा का छाया चित्र अंकित करना उचित समझता हूँ। श्री झा जी के द्वारा विभिन्न पुस्तक व सुमधुर पद्‌यावलियों से युक्त ग्रन्थ की रचना की गयी। उनमें चण्डिकाशतकम्, सपर्याशतकम्, आर्याशतकम, जाह्नवीस्तोत्रम्, संस्कृतगज़लम्, वसन्तशतकम्, मैथिलीगीता, कुरानपुराणं, गीतापद्‌यानुवाद, मुक्तेश्वरसुप्रभातस्तोत्रम, सुप्रभातस्तोत्रम, मदनेश्वरसुप्रभातस्तोत्रम्, चण्डेश्वरसुप्रभातस्तोत्रम, चण्डिकासुप्रभातस्तोत्रम्, श्रीवैद्‌यनाथसुप्रभातस्तोत्र, श्रीविश्वनाथसुप्रभातस्तोत्र तथा गलज्जलिकाशतकम प्रमुख हैं। सम्प्रति भी लेखक की लेखनी माँ सरस्वती की वंदना में कार्यशील है।

-डॉ० सीताचरण झा